पहचान के लक्षण :

1. यह सामाजिक प्राणी है तथा इसमें श्रम-विभाजन पाया जाता है।
2. शरीर सिर, वक्ष तथा उदर में विभेदित।
3. 3 जोड़ी टांगें तथा 2 जोड़ी पंख उपस्थित।
4. पिछले पंख अग्र पंखों की तुलना में छोटे।
5. इनसे शहद तथा मोम प्राप्त होता है।

(J) घोंघा (Pila) :

वर्गिकीय स्थिति :

जगत	:	एनिमेलिया
संघ	:	मोलस्का
वर्ग	:	गेस्ट्रोपोडा
वंश	:	पाइला
जाति	:	ग्लोबोसा

अभिलक्षण :

1. यह ताजा जलीय प्राणी तालाबों व झरनों में पाया जाता है। यह जन्तु उभयचर होता है।
2. इसका शरीर कोमल व असममित होता है तथा एक कवच में बन्द रहता है।
3. घोंघे का कोमल शरीर सिर, पाद तथा अंतरांग पुंज में विभाजित होता है।
4. इसके सिर के अग्र भाग पर एक जोड़ी वृन्त युक्त नेत्र तथा दो जोड़ी स्पर्शक होते हैं।
5. कवच में दो चक्र होते हैं। सबसे ऊपरी चक्र शीर्ष कहलाता है जिसके नीचे वृद्धि रेखाएं उपस्थित होती हैं।
6. जब घोंघा कवच के अन्दर रहता है तो इसका मुख ऑपरकुलम द्वारा बंद रहता है।
7. यह एकलिंगी प्राणी है।
8. परिवर्धन प्रत्यक्ष होता है, लारवा अवस्था नहीं पाई जाती है।

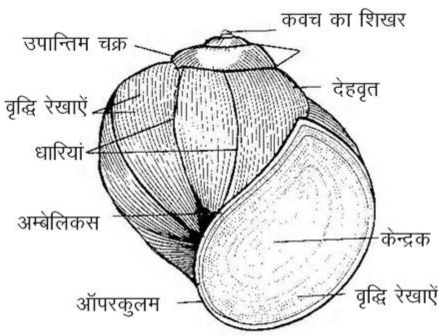

चित्र – पाइला (सेवाभ घोंघा)

पहचान के लक्षण :

1. शरीर पर कुण्डलित, एक कपाटीय कवच।
2. शरीर कोमल, अखण्डित तथा मेन्टल तथा कवच युक्त होता है।
3. आंतरांग पुंज में 8 के आकार का तंत्रिका-तंत्र होता है।
4. विभेदित शरीर चक्र तथा वृद्धि रेखाएं उपस्थित।
5. कवच का नुकीला शीर्ष उपस्थित।
6. गति के लिए पाद (Foot)।

(K) तारा मछली (Asterias) :

वर्गिकीय स्थिति :

जगत	:	एनिमेलिया
संघ	:	इकाइनोडर्मेटा
वर्ग	:	ऐस्टेरॉइडिया
गण	:	फोर्सिपुलेटा
वंश	:	ऐस्टेरिआस
जाति	:	रूबेन्स

अभिलक्षण :

1. इनको सामान्यतः तारा मछली (Star Fish) कहते हैं।
2. यह समुद्र के रेतीले या मिट्टीदार तल में मुक्त जीवी प्राणी होते हैं।
3. यह मांसाहारी होते हैं।
4. इनमें पुनरूद्भवन की अत्यधिक क्षमता पायी जाती है।
5. यह अधिकांशतः भारत तथा अमरीका के समुद्रों में पाये जाते हैं।
6. स्पष्ट शीर्ष (Head) का अभाव।
7. इनका शरीर पंचतयी एवं अरीय सममित होता है।

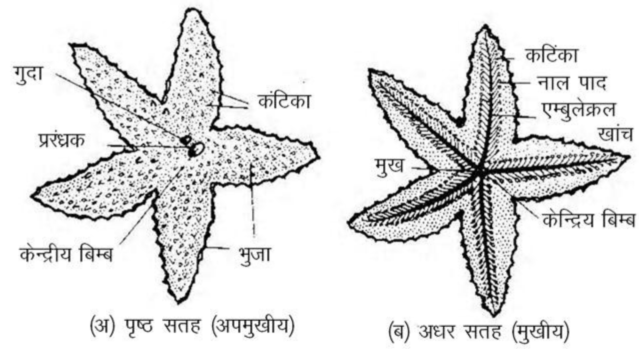

चित्र – ऐस्टेरिआस (तारा मछली)

8. इनके केन्द्रीय भाग में अस्पष्ट केन्द्रीय बिम्ब या डिस्क होती है जिससे पश्च भुजाएं निकलती हैं।
9. शरीर की अधर सतह पर मुख होता है। मुख से प्रत्येक भुजा में एम्बुलेक्रल खांच निकलती है।
10. एम्बुलेक्रल खांच में चूषक युक्त नाल पाद होते हैं। यह गमन अंग की तरह कार्य करते हैं।
11. देहभित्ति चिम्मड़, खुरदरी एवं केल्शियम युक्त अस्थिकाओं या कंटिकाओं का अन्तःकंकाल होता है।
12. अपमुखीय सतह पर केन्द्र के पास गुदा छिद्र तथा दो भुजाओं के मध्य छलनी के समान छिद्र मैड्रीपोराइट होता है।
13. इसमें जल संवहनी तन्त्र पाया जाता है। विशिष्ट उत्सर्जन अंगों का अभाव।
14. यह एक लिंगी होता है। इसमें लैंगिक द्विरूपता नहीं पायी जाती है।
15. इसमें परिवर्धन अप्रत्यक्ष होता है। इसमें लारवा बाइपिन्नेरिया तथा ब्रैकिओलेरिया होते हैं।

पहचान के लक्षण :

1. गमन नाल पादों द्वारा होता है।
2. शरीर तारे के समान होता है।
3. पुनरूद्भवन की अत्यधिक क्षमता होती है।
4. जल संवहन तन्त्र पाया जाता है।

(L) कुत्ता मछली (Scoliodon) :

वर्गिकीय स्थिति :

संघ	:	कॉर्डेटा
उपसंघ	:	वर्टीब्रेटा
खण्ड	:	नैथोस्टोमेटा
अधिवर्ग	:	पिसीज
वर्ग	:	कॉन्ड्रिक्थीज
गण	:	लेमनीफार्मिस
वंश	:	स्कॉलियोडॉन

अभिलक्षण :

1. कुत्ता मछली लवणीय जल (समुद्री जल) में पायी जाती है।
2. इसका शरीर तर्कु रूपी तथा 30 से.मी. से 60 से.मी. लम्बा होता है।
3. इसका शरीर शीर्ष, धड़ तथा पुच्छ में विभेदित होता है।
4. इसका शीर्ष पृष्ठीय अधर सतह से चपटा होकर शुण्ड बनाता है। इसके अधर सतह पर दरार रूपी मुख होता है।
5. इसके शीर्ष के पार्श्व सतह पर 5 जोड़ी क्लोम दरारें होती हैं।

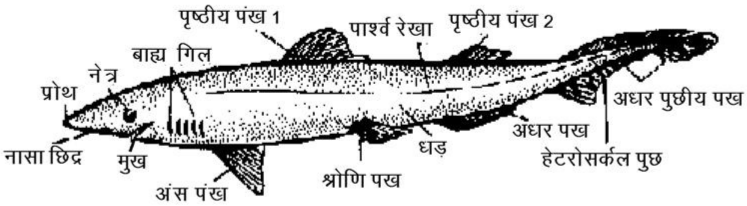

चित्र : स्कॉलियोडॉन (कुत्ता मछली)

6. इसका अन्तःकंकाल उपास्थि का बना होता है।
7. इसके अयुग्मित पंखों में दो पृष्ठीय, एक पुच्छीय तथा एक मध्य अधरीय होता है।
8. इसके युग्मित पंखों में एक जोड़ी अग्र अंस पंख (Pectoral Fins) तथा एक जोड़ी पश्च श्रोणि पंख (Plevic Fins) होता है।
9. इस पर प्लेकायड शल्कों का बाह्य कंकाल होता है।
10. इसका पुच्छीय पंख हेटरोसर्कल होता है।
11. इसकी थुथून के पृष्ठ सतह पर लोरेन्जीनीकी तुम्बिकाएँ पायी जाती हैं।
12. कुत्ता मछली एकलिंगी होती है। इसमें लैंगिक द्विरूपता पायी जाती है। नर में एक जोड़ी मैथुन आलिंगक (Claspers) पाये जाते हैं।

पहचान के लक्षण :

1. इसमें सूंघने की क्षमता अत्यधिक पायी जाती है।
2. मछली की पूंछ उठी हुई एवं थुथून नुकीला होता है।
3. अन्तःकंकाल उपास्थि का बना होता है।
4. बाह्य कंकाल प्लेकाइड शल्कों का बना होता है।
5. पांच जोड़ी क्लोम दरारें पाई जाती हैं।
6. ऑपरकुलम अनुपस्थित।

(M) लेबियो (Labeo) :

वर्गिकीय स्थिति :

संघ	:	कार्डेटा
उपसंघ	:	वर्टीब्रेटा
खण्ड	:	नैथोस्टोमेटा
अधिवर्ग	:	पिसीज
वर्ग	:	ऑस्टिक्थीज
गण	:	साइप्रिनीफार्मिस
वंश	:	लेबियो

अभिलक्षण :

1. लेबियो को सामान्यतया 'रोहू' कहते हैं।
2. यह अण्डज, असमतापी होती है।
3. यह अलवणीय (स्वच्छ) जल में पायी जाती है।
4. इसका शरीर तर्कु रूपी तथा लम्बा होता है।
5. शरीर शीर्ष, धड़ तथा पुच्छ में विभेदित होता है।
6. शीर्ष आगे की ओर छोटी शुण्ड बनाता है।
7. मुख अग्र सिरे पर होता है, जो मांसल ओष्ठों से घिरा रहता है।
8. शीर्ष पर एक जोड़ी नेत्र तथा एक जोड़ी नासा रन्ध्र स्थित होते हैं।
9. इसमें वायु आशय (Air Bladders) पाये जाते हैं।
10. इसमें श्वसन अंग चार जोड़ी क्लोम होते हैं।
11. अन्तःकंकाल अस्थि का बना होता है।
12. बाह्यकंकाल साइक्लॉइड शल्कों का बना होता है।

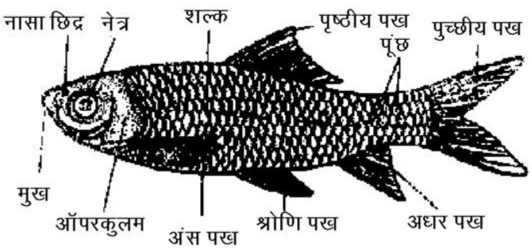

चित्र : लेबियो (रोहू)

पहचान के लक्षण :

1. शरीर तर्कु आकार का।
2. अंस, श्रोणी, पुच्छ तथा गुदीय पंख उपस्थित।
3. पार्श्व रेखातन्त्र उपस्थित।
4. शरीर पृष्ठ सतह पर गहरा तथा अधर सतह पर हल्का।
5. प्रच्छद (Operculum) द्वारा आवरित गिल्स उपस्थित।
6. अन्तःकंकाल अस्थि का बना होता है।
7. बाह्यकंकाल साइक्लॉइड शल्कों का बना होता है।
8. मैथुन अंगों का अभाव।

(N) मेंढ़क राना टिग्रीना (Rana Tigrina) :

वर्गिकीय स्थिति :

संघ	:	कार्डेटा
उपसंघ	:	वर्टीब्रेटा
खण्ड	:	नैथोस्टोमेटा
अधिवर्ग	:	टेट्रापोडा
वर्ग	:	एम्फिबिया
गण	:	एन्यूरा
वंश	:	राना
जाति	:	टिग्रीना

अभिलक्षण :

1. इसे सामान्यतया 'भारतीय मेंढक' कहते हैं। यह अलवणीय (स्वच्छ) जल में या उसके किनारे पर पाया जाता है, क्योंकि–
   (1) त्वचीय श्वसन के लिए त्वचा को नम रखता है।
   (2) अण्डे जल में देता है तथा समतापी होता है।
2. यह विषहीन उभयचारी होते हैं।
3. इसकी त्वचा काले धब्बों युक्त हरे रंग की होती है।
4. मध्य पृष्ठ सतह पर एक पीली रेखा पायी जाती है जो इसकी मुख्य पहचान है।
5. इसका शीर्ष चपटा तथा लगभग त्रिकोणीय होता है।
6. इसके प्रोथ के पृष्ठ सतह पर दो बाह्य नासा-रन्ध्र पाये जाते हैं।
7. नासा-रन्ध्रों के पीछे बड़े नेत्र पाये जाते हैं, जो नेत्र पलकों से घिरे रहते हैं।

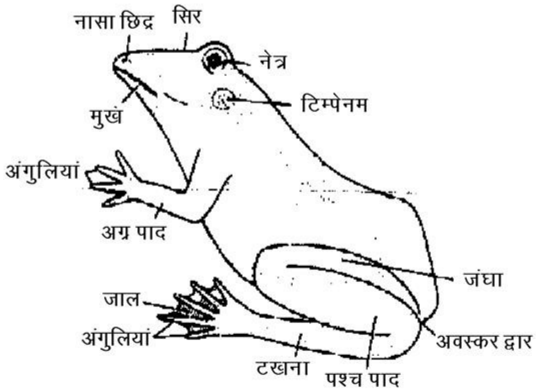

चित्र : राना टिग्रीना (मेंढ़क)

8. नेत्रों के पीछे त्वचा पर चिकना गोल धब्बा जैसा दिखाई देता है जो कि टिम्पैनम कहलाता है। यह ध्वनि तरंगों को ग्रहण करता है।
9. इसकी त्वचा शल्क रहित तथा लसलसी होती है।
10. मेंढ़क में दो जोड़ी पाद पाये जाते हैं। अग्र पाद में चार तथा पश्च पादों में पांच अंगुलियां नखर रहित होती हैं। पश्च पादों की अंगुलियों के बीच तैरने के लिए जाल पाया जाता है।
11. इसके निचले जबड़े में दांत अनुपस्थित होते हैं।
12. जीभ बड़ी, मांसल तथा द्विशाखी होती है जो आगे की ओर जुड़ी रहती है तथा पीछे स्वतन्त्र होती है।
13. आन्तरिक नासा-रन्ध्रों के दोनों ओर 'वोमेराइन दांत' पाये जाते हैं।
14. यह मांसाहारी होता है तथा छोटे-मोटे जलीय कीट, कृमि आदि को खाता है।
15. अग्रगर्ती सेंट्रम युक्त कशेरुकाएं।
16. हृदय तीन कोष्ठीय।
17. श्वसन के लिए त्वचा एवं फेफड़े पाये जाते हैं।
18. अण्डे देने वाले प्राणी।
19. जीवनवृत्त में भेक शिशु अवस्था पाई जाती है।

पहचान के लक्षण :

1. कशेरुक दण्ड उपस्थित।
2. शरीर पृष्ठ से भूरा तथा अधर से पीला होता है।
3. छोटे अग्रपाद व लम्बे पश्चपाद।
4. उभरे हुए नेत्र तथा टिम्पेनम।

(O) छिपकली हेमीडेक्टाइलस (Hemidactylus) :

वर्गिकीय स्थिति :

संघ	:	कॉर्डेटा
उपसंघ	:	वर्टीब्रेटा
खण्ड	:	नैथोस्टोमैटा
अधिवर्ग	:	टेट्रापोड़ा
वर्ग	:	रेप्टीलिया
गण	:	स्क्वेमेटा
उपगण	:	लेसरटिलिया
वंश	:	हेमीडेक्टाइलस

अभिलक्षण :

1. इसे सामान्यतया 'दीवार छिपकली' अथवा 'घरेलू छिपकली' कहते हैं।
2. यह रात्रिचर एवं मांसाहारी होती है। यह छोटे अकशेरूकी तथा कीटों का भक्षण करती है।
3. नेत्र पर चल पलकें होती हैं।
4. इसका शरीर हल्के हरे रंग का होता है तथा इस पर छोटे-छोटे शल्क पाये जाते हैं।
5. इसका शरीर सिर, धड़ एवं पूंछ में विभेदित होता है। सिर चपटा तथा चौड़ा होता है।

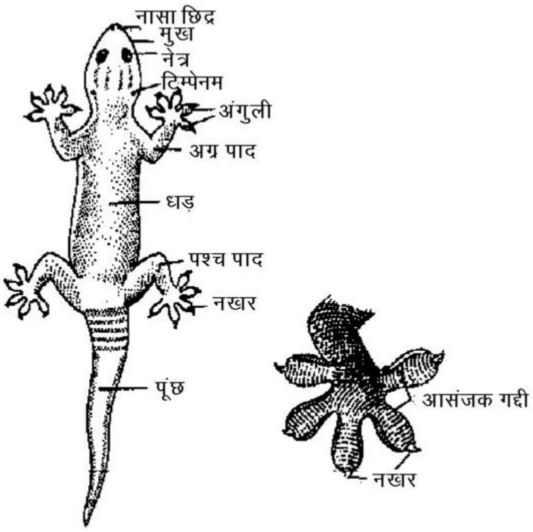

चित्र : हेमीडेक्टाइलस (घरेलू छिपकली)

6. इसके अग्र एवं पश्च पाद अधिक विकसित होते हैं तथा नखर युक्त अंगुलियों के सिरे पर आसंजक गद्दियां लैमेली पाई जाती हैं जो दीवार पर चढ़ने में सहायता करती हैं।
7. जीभ छोटी लसलसी बहिर्वर्तित होती है।
8. यह अण्डायुज होती हैं तथा कवच युक्त अण्डे देती है।

पहचान के लक्षण :

1. इसकी पूंछ स्वःइच्छा से, किसी भी जगह से टूट जाती है। इस क्रिया को स्वांगोच्छेदन कहते हैं। पूंछ में पुनरूद्भवन की क्षमता पायी जाती है।
2. ये चिकनी सतहों, दीवार तथा छत पर चलने के लिए अनुकूलित होती है।

(P) कबूतर कोलम्बा लिविआ (Columba Livia) :

वर्गिकीय स्थिति :

संघ	:	कॉर्डेटा
उपसंघ	:	वर्टीब्रेटा
खण्ड	:	नैथोस्टोमैटा
अधिवर्ग	:	टेट्रापोडा
वर्ग	:	एवीज
उपवर्ग	:	नियोर्निथीज
गण	:	कोलम्बीफॉर्मीज
वंश	:	कोलम्बा
जाति	:	लीविया

अभिलक्षण :

1. इसको कबूतर (Pigeon) कहते हैं।
2. यह भारत, प्रशान्त महासागर के तट अमेरिका आदि में पाया जाता है।
3. इसका शरीर सिर, ग्रीवा, धड़ एवं पुच्छ में बंटा होता है।
4. शरीर पर परों (Feathers) का आवरण होता है।
5. नेत्र में निमेषक पटल पाई जाती है।
6. इसका शरीर तर्कु रूपी होता है।
7. सिर पर नेत्र, नासा छिद्र पाये जाते हैं।
8. सिर के अग्र भाग पर विकसित चोंच छोटी एवं कुछ मुड़ी होती है।
9. चोंच के आधार पर फूली हुई त्वचा ढकी रहती है, इसे सेरी कहते हैं।

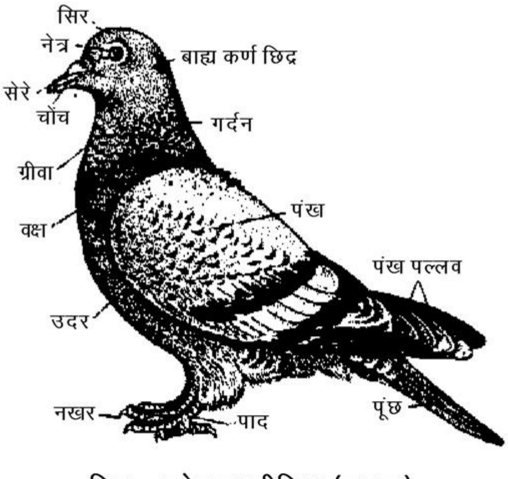

चित्र : कोलम्बा लीविआ (कबूतर)

10. अग्र पाद पंखों के रूप में पाये जाते हैं।
11. नर में मैथुन अंग का अभाव होता है।
12. ये अण्डज एवं समतापी होते हैं।
13. ह्रदय पूर्ण चार कोष्ठीय।
14. श्वसन के लिए फेफड़े पाये जाते हैं।

पहचान के लक्षण :

1. मुख के स्थान पर एक छोटी चोंच उपस्थित।
2. अग्र पाद पंखों में रूपान्तरित होते हैं।
3. शरीर पर परों का बाह्य कंकाल।
4. पैरों पर शल्क तथा अंगुली युक्त पंजे।
5. गर्दन पर बैंगनी मुद्राकार धारी होती है।
6. नेत्र में निमेषक पटल उपस्थित।

(Q) खरगोश ऑरिक्टोलेगस (Oryctolagus) :

वर्गिकीय स्थिति :

संघ	:	कॉर्डेटा
उपसंघ	:	वर्टीब्रेटा
खण्ड	:	नैथोस्टोमैटा
अधिवर्ग	:	टेट्रापोडा
वर्ग	:	मैमलिया
उपवर्ग	:	थीरिया
अधोवर्ग	:	यूथीरिया
गण	:	लैगोमोर्फा
वंश	:	ओरिक्टोलेगस
जाति	:	क्यूनिक्यूलस

अभिलक्षण :

1. यह विश्वव्यापी जन्तु है। इसे 'खरगोश' कहते हैं।
2. यह यूथी (Gregareous) प्राणी है क्योंकि यह समूह में रहता है।
3. यह सन्ध्याचर बिलकारी जन्तु होते हैं।
4. ये समतापी, स्तनी जन्तु हैं।
5. यह शाकाहारी तथा विष्ठाभोजी प्राणी है।
6. शरीर पर चूचुक युक्त स्तन पाये जाते हैं।
7. यह एक बार में 5-7 शिशुओं को जन्म देता है।
8. यह परिपक्व अवस्था में शिशु जन्म करते हैं।
9. नर में मैथुन अंग पाये जाते हैं।
10. यह तेज दौड़ने वाला जन्तु है जो कि अंगुलाचारी गमन करता है।

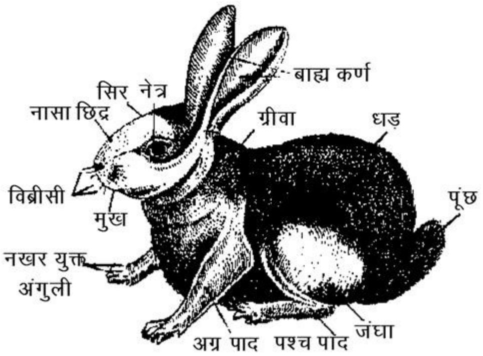

चित्र : ऑरिक्टोलेगस (खरगोश)

11. इसकी त्वचा फर युक्त होती है जो कि गर्म वस्त्र के निर्माण में प्रयुक्त होती है।
12. बाह्य कर्ण पाये जाते हैं।
13. शरीर रोम का आवरण होता है।

पहचान के लक्षण :

1. शरीर पर रोम पाये जाते हैं।
2. कशेरूक दण्ड उपस्थित।
3. गतिशील बाह्य कर्ण पल्लव उपस्थित।
4. स्तन ग्रंथियां चूचुकयुक्त होती हैं।

मौखिक प्रश्न

प्रश्न–1. हाइड्रा में पाए जाने वाली दंश कोशिकाओं का क्या कार्य है?
उत्तर– दंश कोशिकाएँ गमन व शिकार पकड़ने का कार्य करती हैं।
प्रश्न–2. अमीबा में भोज्य पदार्थ को ग्रहण करने को क्या कहते हैं?
उत्तर– फेगोसाइटोसिस।
प्रश्न–3. यकृतकृमि में उत्सर्जन हेतु कौन-सी संरचनाएं पाई जाती हैं?
उत्तर– ज्वाला कोशिकाएं।
प्रश्न–4. केंचुए के शरीर में 100–120 खण्ड होते हैं, इन खण्डों को क्या कहते हैं?
उत्तर– मेटामीयर्स
प्रश्न–5. मेंढ़क किस गण के अन्तर्गत रखा जाता है?
उत्तर– एन्यूरा।
प्रश्न–6. कीटों का शरीर कितने भागों में बंटा होता है?
उत्तर– तीन भागों (सिर, वक्ष व उदर) में।
प्रश्न–7. कुत्ता मछली (स्कॉलियोडोन) में किस प्रकार के शल्क पाये जाते हैं?
उत्तर– प्लेकॉइड शल्क।

प्रयोग–4

उद्देश्य (Object) : ऊतकों का अध्ययन और पादप व जन्तु कोशिकाओं के आकार व रूपों में विभिन्नता (उदा. मध्योतक कोशिका, रक्षक कोशाएं, मृदूतक, स्थूलकोण, दृढ़ोत्तक, जायलम, फ्लोयम, शल्की उपकला, पेशीतन्तु तथा स्तनियों की रक्त कोशिकाओं का अस्थायी/स्थायी स्लाइड द्वारा अध्ययन।)

उपकरण (Equipments) : पादप ऊतकों की स्थायी स्लाइड्स, सूक्ष्मदर्शी, कांच की स्लाइड्स, चिमटियां, कवरस्लिप, ग्लिसरीन, मेथलिन ब्लू अभिरंजक, जल, ब्रुश आदि।

विधि (Procedure) :

पादप की स्थायी स्लाइड का सूक्ष्मदर्शी के नीचे पहले निम्न आवर्धन व फिर उच्च आवर्धन में अवलोकन कीजिए। प्रत्येक ऊतक के अभिलक्षणों का अध्ययन कर अपने प्रायोगिक अभिलेख में चित्र बनाइये तथा लक्षण लिखिए।

प्रेक्षण (Observation) तथा टिप्पणी (Comments) :

(1) स्तम्भाकार मुदूत्तक (Palisade Parenchyama) :

1. कोशिकाएँ आकृति में स्तम्भाकार हैं।
2. पतली भित्ति युक्त कोशिकाओं के मध्य अन्तःकोशिकीय स्थल अनुपस्थित।
3. कोशिकाओं में हरित लवक पाया जाता है।

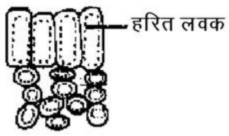

चित्र : पेलिसेड पेरेन्काइमा

(2) रक्षक कोशिकाएँ (Guard Cells) :

1. ये विशेष प्रकार की अधिचर्म कोशिकाएँ हैं, जो रन्ध्र को घेरे रहती हैं।
2. द्विबीजपत्री पर्ण में रक्षक कोशिकाएँ वृक्काकार व एक बीजपत्री पौधों में डम्बल आकार की होती हैं।

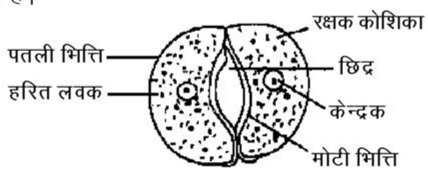

चित्र : रक्षक कोशिका व रन्ध्र

3. रक्षक कोशिकाओं की बाहरी भित्ति पतली व आन्तरिक भित्ति मोटी होती है।
4. ये जीवित कोशिकाएँ हैं तथा इनमें हरित लवक पाया जाता है।

(3) मृदूतक (Parenchyma) :

1. समव्यासी, अण्डाकार, बेलनाकार या बहुभुजीय कोशिकाएँ।
2. कोशिकाएँ सजीव एवं पतली भित्ति वाली होती हैं।
3. यह पादप के कोमल भागों में पाया जाता है।
4. अन्तःकोशिकीय स्थल उपस्थित।

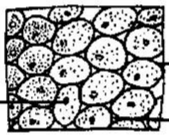

चित्र : मृदूतक

(4) स्थूल कोण ऊतक (Collenchyma) :

1. दीर्घीत या बहुकोणीय कोशिकाएँ।
2. कोशिकाओं के कोणों पर स्थानीय स्थूलन।
3. अन्तःकोशिकीय स्थल उपस्थित या अनुपस्थित।

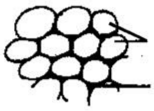

चित्र : स्थूल कोण ऊतक

(5) दृढ़ोतक (Sclerenchyma) :

1. लिग्निन तथा सेलूलोज के निक्षेपण के कारण अत्यधिक स्थूलित भित्तियाँ।
2. परिपक्व कोशिका में जीवद्रव्य नष्ट हो जाता है और कोशिका मृत हो जाती है।

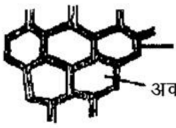

चित्र : दृढ़ोतक

(6) जायलम (Xylem) :

1. जायलम मृदूतकीय कोशिकाओं द्वारा घिरे।
2. इसमें जटिल उत्तक वाहिकाएँ, वाहिनिकाएँ, रेशे एवं मृदु उत्तक पाये जाते हैं।
3. जायलम रेशे संकरी गुहा युक्त तथा स्थूलित।
4. वाहिनिकाएं घनी लिग्निनयुक्त।

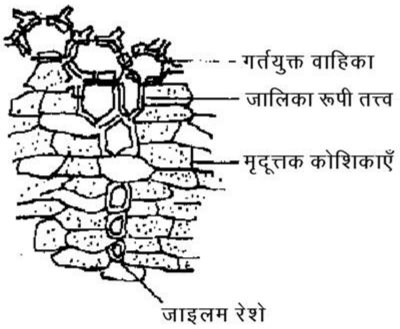

चित्र : जायलम का अनुप्रस्थ काट

(7) फ्लोएम (Phloem) :

1. खाद्य संवंहनी चालनी नलिकाएँ लम्बे किनारों से किनारों जुड़ी कोशिकाओं द्वारा निर्मित।
2. चालनी नलिका में जीवद्रव्य उपस्थित लेकिन केन्द्रक का अभाव।
3. सहायक कोशिकाएँ पतली भित्ति युक्त, जीवित केन्द्रक युक्त कोशिकाएँ होती हैं तथा चालनी नलिका के पास होती हैं।
4. फ्लोएम मृदूतक भी उपस्थित।

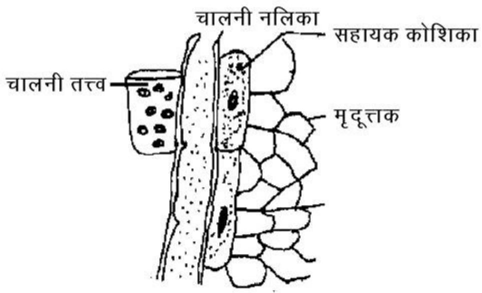

चित्र : फ्लोएम का अनुप्रस्थ काट

जन्तु ऊतक (Animal Tissue) :

(8) शल्की उपकला (Squamous epithelium) का अध्ययन :

1. शल्की उपकला समान शल्क की तरह, बहुभुजी एवं चपटी कोशिकाओं की परत होती है।
2. इन कोशिकाओं में केन्द्रक पाया जाता है।
3. यह बाहर एवं अन्दरूनी परतों को ढकने का कार्य करती हैं।
4. इन कोशिकाओं की एकल परत को सरल शल्की उपकला कहते हैं।
5. यह विसरण द्वारा पदार्थों को एक ओर से दूसरी ओर भेजने का कार्य करती हैं।
6. यह देहगुहा का आवरण बनाती हैं, जिसे पेरीटोनियम कहते हैं।
7. यह रुधिर एवं लसिका वाहिनियों की गुहा का आवरण बनाती हैं जिसे एण्डोथीलियम कहते हैं।
8. यह वृक्कों में बोमैन सम्पुट तथा हेनले लूप की दीवार बनाती हैं।

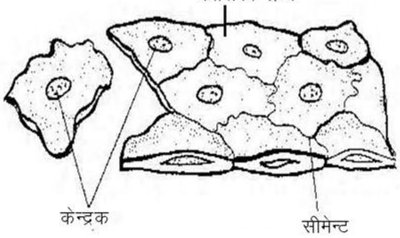

चित्र : शल्की उपकला

(9) पेशीय तन्तुओं का अध्ययन करना :

विधि (Procedure) :

1. एक कॉकरोच को विच्छेदन तश्तरी में रखिए।
2. कॉकरोच की टांग के कॉक्सा भाग के काइटिनयुक्त अन्तःकंकाल को चिमटी से हटा दीजिए।
3. इस क्षेत्र से सफेद पेशी रेशों को अलग कीजिए।
4. सोडियम क्लोराइड (नमक) को आसुत जल में घोलकर 6% लवणीय विलयन बनाइए।
5. सफेद पेशी रेशों को इस लवणीय जल में रखिए।
6. पेशी तन्तु या रेशे का एक छोटा टुकड़ा लेकर इसे आसुत जल से धोइए।
7. पेशी तन्तु को स्लाइड पर रखिए तथा इन पेशी तन्तुओं को सूई द्वारा दबाइए।
8. पेशी तन्तु पर एक बूंद मेथिलिन ब्लू अभिरंजक की डालिए।

चित्र : रेखित पेशियाँ

9. तन्तुओं पर ग्लिसरीन की कुछ बूंदें डालकर कवर स्लिप से ढ़क दीजिए।
10. अब स्लाइड को सूक्ष्मदर्शी की सहायता से पहले कम आवर्धन तथा बाद में अधिक आवर्धन में अवलोकन करें।

प्रेक्षण (Observation) :

1. पेशीय तन्तु लम्बे, बेलनाकार तथा अशाखित होते हैं।
2. प्रत्येक पेशी तन्तु एक प्रत्यास्थ झिल्ली सार्कोलीमा में बन्द रहता है, जिसमें उपस्थित कोशिका द्रव्य सार्कोप्लाज्म कहलाता है।
3. प्रत्येक तन्तु चपटे तथा दीर्घीत केन्द्रक युक्त होता है।
4. पेशी तन्तुओं में एकान्तरित रूप से हल्की तथा गहरी धारियां पाई जाती हैं। ऐसे पेशी तन्तुओं को रेखित पेशी-तन्तु कहते हैं।
5. पेशी तन्तु की गहरी पट्टी को ए बैण्ड तथा हल्की पट्टी को आई बैण्ड कहते हैं।

सावधानियां (Precautions) :

1. कॉकरोच के पैर के कॉक्सा भाग से काइटिन युक्त कवच को हटाइए।
2. अतिरिक्त अभिरंजन को जल से धोकर हटा दें।
3. उपयुक्त अभिरंजन हेतु पेशी तन्तुओं को 2–3 मिनट के लिए रखिए।
4. कवरस्लिप को सावधानी से रखिए ताकि वायु का बुलबुला प्रवेश न कर सके।

(10) स्तनी रक्त की फिल्म का अध्ययन करना :

आवश्यक सामग्री : साफ स्लाइड, ड्रॉपर, कीटाणु-रहित सुई, चिमटी, स्प्रिट, स्प्रिट-लैम्प, लिशमेन-स्टेन, सूक्ष्मदर्शी।

विधि :

1. दो शुष्क तथा साफ स्लाइड्स लें।
2. बायें हाथ की मध्य अंगुली के ऊपरी भाग को स्प्रिट से साफ करें और सूखने दें। अब नुकीली निर्जमीकृत सुई से अंगुली के अग्र-भाग को तेजी से भेद दें। रक्त की पहली बूँद को साफ कर दें तथा अंगुली को दबाकर रक्त की नवीन बूंद स्लाइड के एक छोर पर मध्य में ले लें।
3. फुरती से स्लाइड को सख्त धरातल पर रखें तथा स्लाइड को बायें अंगूठे और बायीं तर्जनी से पकड़े रहें।

4. दूसरी स्लाइड को रक्त-बिन्दु से थोड़ा आगे सीधे हाथ से 45 डिग्री का कोण बनाते हुए स्थिर करें। अब स्लाइड के छोर पर आगे की ओर खींचें, जिससे स्लाइड रक्त-बिन्दु के सम्पर्क में आ जाये तथा रक्त-बिन्दु स्लाइड के छोर पर फैल जाये। अब इसको पीछे की ओर खींचें, जिससे रक्त की फिल्म तैयार हो जाए।
5. अब रक्त फिल्म वाली स्लाइड को लिशमेन (Leishman) स्टेन से या ईओसिन तथा मिथाइलीन ब्ल्यू से अभिरंजित करें। लिशमेन से अभिरंजित करने के लिए रक्त फिल्म को सुखा लें तथा स्लाइड के ऊपर स्टेन अच्छी तरह से फैला दें। एक मिनट के पश्चात् इसके ऊपर अधिकता से डिस्टिल्ड पानी डाल दें और पानी तथा स्टेन को भली प्रकार मिलने दें। सात मिनट के बाद पानी व स्टेन को बहा दें और रक्त फिल्म को दो मिनट के लिए डिस्टिल्ड पानी से ढक दें। इस पानी को बहा दें तथा नवीन डिस्टिल्ड वॉटर से फिर ढक दें। अब इसको भी बहा दें और स्लाइड को सूखने दें। अब स्लाइड का सूक्ष्मदर्शी से अवलोकन करें :

   लाल रक्ताणु, गुलाबी तथा सफेद रक्ताणुओं की केन्द्रिकाएँ लाली लिये हुए बैंगनी रंग की, ऐसिडोफिलिक कणिकाएँ गुलाबी और बेसोफिलिक कणिकाएँ नीले रंग की दिखाई देंगी।

रक्त कणिकाओं के गुण :

(i) लाल-रक्त कणिकाएँ या इरिथ्रोसाइट—ये गोल अण्डाकार द्विनतोदर डिस्क के समान होती हैं, जिसमें केन्द्रीय भाग किनारों की अपेक्षा पतला होता है। एक सी.सी. रक्त में इनकी संख्या लगभग पांच लाख होती है। इनमें केन्द्रक का अभाव होता है।

(ii) श्वेत-रक्त कणिकाएँ या ल्यूकोसाइट्स—ये लाल कणिकाओं की अपेक्षा काफी बड़ी होती हैं पर संख्या में काफी कम। ये रंगहीन, केन्द्र युक्त तथा जीवित अवस्था में अमीबा के समान अनियमित आकार की पर अभिरंजन के पश्चात् गोलाकार दिखाई देती हैं।

ये मुख्य रूप से दो प्रकार की—कणमय तथा कण रहित होती हैं।

कणमय श्वेत रक्त कणिकाएँ तीन प्रकार की होती हैं—

(1) इओसिनोफिल या एसीडोफिल : इन कोशिकाओं के कण बड़े होते हैं तथा केन्द्रक द्विपालित होता है। इनमें कोशिका-द्रव्य कण गहरे, चमकदार, लाल या नारंगी रंग से अभिरंजित होते हैं। इनकी संख्या एक सी.सी. में 2-3 प्रतिशत होती है।

(2) बेसोफिल : इनकी संख्या बहुत कम अर्थात् एक सी.सी. में लगभग 0.5 प्रतिशत होती है। ये गोलाकार होते हैं तथा केन्द्रक दो या तीन कोरमय तथा मध्य में स्थित होता है। कोशिका द्रव्य कण नीले या बैंगनी रंग से अभिरंजित होते हैं।

(3) न्यूट्रोफिल : इनकी संख्या सबसे अधिक लगभग 55 से 65 प्रतिशत होती है। ये लगभग गोलाकार तथा इनके कण अपेक्षाकृत सूक्ष्म होते हैं। केन्द्रक प्रमुख, मध्यमी तथा बैंगनी

चित्र : मानव रक्त कणिकाएँ

नीले रंग से अभिरंजित होते हैं। केन्द्रक 2 से 5 पालियों में विभक्त होता है। इसमें कोशिका द्रव्य के कण गहरे गुलाबी या बैंगनी रंग लिये हुए होते हैं।

कणरहित श्वेत रक्त कणिकाएँ दो प्रकार की होती हैं–

(1) लिम्फोसाइट्स : ये अपेक्षाकृत छोटी तथा गोलाकार होती हैं तथा इनका केन्द्रक गोलाकार तथा काफी बड़ा अविभाजनीय होता है। इनका अनुपात कुल श्वेत रक्त कणिकाओं का 25-30 प्रतिशत होता है।

(2) मोनोसाइट्स : ये परिमाण में बड़ी होती हैं पर इनका गोलाकार केन्द्रक अपेक्षाकृत छोटा होता है। ये लगभग 3 से 10 प्रतिशत होती है।

रक्त प्लेटलेट्स–ये कणिकाएँ विशेष रूप से स्तनियों में पाई जाती हैं। ये अत्यन्त सूक्ष्म, चपटी, गोलाकार तथा प्रचुर मात्रा में पाई जाती हैं। इनके मध्य भाग में कणकीय पदार्थ होता है, जो नीला-बैंगनी रंग का नजर आता है।

सावधानियां (Precautions) :

1. केवल निर्जलीकृत सूई का उपयोग करना चाहिए।
2. अंगुली को भेदने के लिए हर बार नई सूई का उपयोग करें।
3. वायु द्वारा शुष्क स्लाइड का अध्ययन करना चाहिए।
4. परत समरूप होनी चाहिए।

मौखिक प्रश्न

प्रश्न–1. पेशी तन्तु की इकाई क्या है?

उत्तर– सार्कोमीयर।

प्रश्न–2. औतिकी क्या है?

उत्तर– ऊतकों का सूक्ष्मदर्शीय अध्ययन औतिकी कहलाता है।

प्रश्न–3. कीटों में किस प्रकार की पेशियां पाई जाती हैं?

उत्तर– कीटों में केवल रेखित पेशियां पाई जाती हैं।

प्रश्न–4. ऊतक किसे कहते हैं?

उत्तर– समान उत्पत्ति, संरचना व कार्य करने वाले कोशिकाओं के समूह को ऊतक कहते हैं?

प्रश्न–5. रक्त प्लाज्मा क्या है?

उत्तर– यह हल्के पीले रंग का द्रव है, जिसमें रक्त कणिकाएँ तैरती रहती हैं।

प्रश्न–6. रक्त में हिमोग्लोबीन का क्या कार्य है?

उत्तर– हिमोग्लोबिन एक लाल वर्णक है, जो ऑक्सीजन वाहक का कार्य करता है।

प्रश्न–7. रक्त स्कन्दन में कौन-सी रक्त कणिकाएँ भाग लेती हैं?

उत्तर– प्लेटलेट्स।

प्रयोग–5

प्याज के मूलाग्र में समसूत्री विभाजन का अध्ययन

आवश्यक सामग्री (Essential Requirements) : स्लाइड, कवर स्लिप, ग्लास ड्रॉपर, बीकर, काँच की बोतल, सूक्ष्मदर्शी, स्प्रिट लेम्प, फिल्टर पेपर, एसिटोकार्मिन अभिरंजक, एसिटिक अम्ल, (1N) HCl [(8 मि.ली.) HCl को 100 मि.ली. आसुत जल में घोलें], वृद्धि अवस्था में प्याज की जड़ों का शिखर भाग अर्थात् मूल शीर्ष।

विधि (Procedure) :

सर्वप्रथम एक छोटे मुँह के जार में जल भरकर उस पर एक प्याज कन्द को इस प्रकार रखें, जिससे कन्द की शुष्क मूल जल से स्पर्श करती रहें। 5-7 दिन बाद इनमें नई मूल विकसित होने लग जायेगी।

1. प्याज की विकसित मूल को स्वच्छ जल से धोकर मूल शीर्ष (Root tip) को तेज धार युक्त ब्लेड से काटकर एक वॉच ग्लास में कुछ बूंदें (1N) HCl की डालकर मूलाग्र या मूल शीर्ष को हल्का गर्म करें। मूल शीर्ष को आसुत जल में धोकर एक स्वच्छ स्लाइड पर रखें।
2. मूल शीर्ष पर 2-4 बूंदें ऐसिटोकार्मिन अभिरंजक की डालें एवं कवर स्लिप रखकर अंगूठे से हल्का-सा दबाव डालें, जिससे मूल शीर्ष में उपस्थित कोशिकाएँ परस्पर पृथक् होकर एक कुचलन (Squash) में परिवर्तित हो जायेंगी।
3. स्लाइड को हल्का-सा गर्म करें।
4. अतिरिक्त अभिरंजक की मात्रा को फिल्टर पेपर से सोख लें।
5. सूक्ष्मदर्शी की सहायता से इस स्लाइड का अध्ययन करें।
6. इस स्लाइड में समसूत्री विभाजन की विभिन्न अवस्थाएँ देखें, उन्हें पहचानें एवं नामांकित चित्र बनाएँ।

समसूत्री विभाजन की प्रावस्थाएँ :

पूर्वावस्था (Prophase)

1. इस प्रावस्था में केन्द्रक का आकार बड़ा हो जाता है तथा गुणसूत्र पहले पतले एवं स्पष्ट हो जाते हैं।
2. केन्द्रिका (Nucleolus) एवं केन्द्रक झिल्ली (Nuclear Mombrance) विलुप्त हो जाती हैं।
3. प्रत्येक गुणसूत्र लम्बाई में दो समान अर्द्धगुणसूत्रों में विभक्त हो जाते हैं परन्तु दोनों अर्द्धगुणसूत्र अपने-अपने बिन्दुओं द्वारा परस्पर संलग्न रहते हैं।
4. तर्कु तन्तु दोनों सिरों की ओर प्रकट हो जाते हैं।

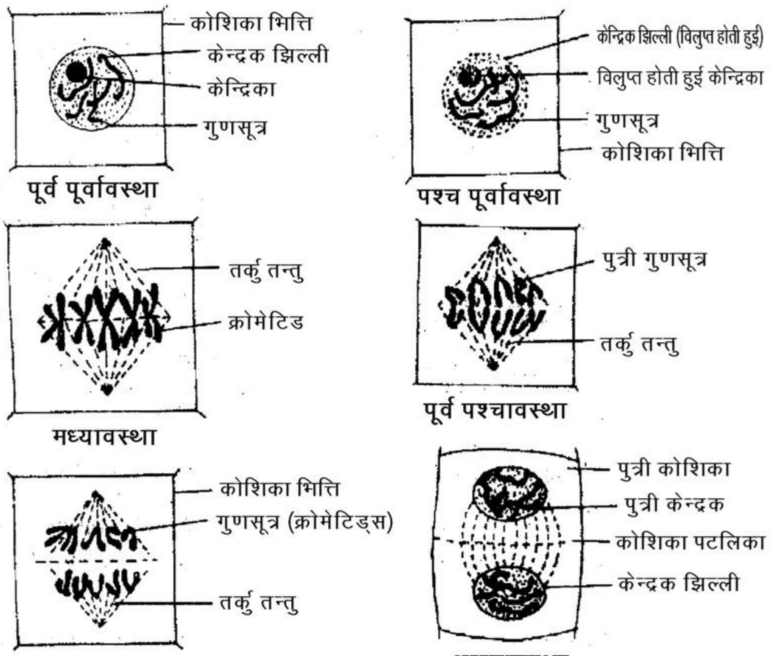

चित्र : प्याज की मूल शीर्ष में समसूत्रीय विभाजन की विभिन्न प्रावस्थाएँ

मध्यावस्था (Metaphase) :

1. इस प्रावस्था में सभी गुणसूत्र सक्रियता से गति करते हुए मध्यवर्ती प्लेट अर्थात् मेटोफेज प्लेट पर एकत्रित हो जाते हैं।
2. तर्कु तंतुओं का निर्माण पूर्ण हो जाता है।
3. इस अवस्था में गुणसूत्र छोटे व मोटे होते हैं।

पश्चावस्था (Anaphase) :

1. इस प्रावस्था में प्रत्येक गुणसूत्र अपने-अपने गुणसूत्र बिन्दू पर विभाजित हो दो पुत्री गुणसूत्रों में बंट जाते हैं।
2. सभी पुत्री गुणसूत्र अपने-अपने बिन्दुओं सहित विपरीत ध्रुवों की तरफ खिंचने लगते हैं।
3. गुणसूत्रों का विपरीत ध्रुवों की ओर गमन सेन्ट्रोमीयर के मध्य प्रतिकर्षण के कारण होता है।

4. इस प्रावस्था में पुत्री गुणसूत्र ध्रुवों पर एवं उनके गुणसूत्र बिन्दु परिधि की ओर विन्यासित रहते हैं।
5. ध्रुवों की ओर गति के समय प्रत्येक गुणसूत्र अपने गुणसूत्र बिन्दु के स्थान के अनुसार एक विशिष्ट आकार, जैसे V, J या L का दिखाई देता है।

अन्त्यावस्था (Telophase) :

1. यह प्रावस्था पूर्वावस्था के बिल्कुल विपरीत होती है।
2. इस प्रावस्था में गुणसूत्र पतले व कुण्डलित हो जाते हैं।
3. गुणसूत्रों के दोनों समूहों के चारों ओर केन्द्रक कला का निर्माण हो जाता है।
4. केन्द्रिका का पुनः निर्माण हो जाता है।
5. इस प्रकार दो संतति कोशिका केन्द्रकों का निर्माण हो जाता है।

केन्द्रक विभाजन के पश्चात् कोशिका द्रव्य का विभाजन होता है एवं अंत में दो समान संतति कोशिकाओं का निर्माण होता है।

मौखिक प्रश्न

प्रश्न–1. क्रोमेटिन गुणसूत्रों में कैसे परिवर्तन होते हैं?

उत्तर– जल के त्याग तथा कुण्डलन द्वारा क्रोमेटिन गुणसूत्र में बदल जाते हैं।

प्रश्न–2. समसूत्री विभाजन समान विभाजन क्यों कहलाता है?

उत्तर– गुणसूत्रों की समान संख्या पुत्री कोशिकाओं में मातृ कोशिका के समान बनी रहती है।

प्रश्न–3. समसूत्री विभाजन कहां होते हैं?

उत्तर– समसूत्री विभाजन कायिक कोशिकाओं में होते हैं।

प्रश्न–4. पादप व जन्तुओं में समसूत्री विभाजन में अन्तर बताइए।

उत्तर–

क्रम संख्या	पादपों में	जन्तुओं में
01.	कोशिका भित्ति उपस्थित।	कोशिका भित्ति अनुपस्थित।
02.	तारककाय अनुपस्थित।	तारककाय उपस्थित।
03.	तारक अरों का निर्माण नहीं।	तारक अरों का निर्माण होता है।

प्रयोग–6

उद्देश्य (Object) : जड़, तना तथा पत्तियों के विभिन्न रूपान्तरण।

1. मूल एवं इसके विभिन्न रूपान्तरणों का अध्ययन (Root Modifications) :

बीजपत्री पादप जड़, तना एवं पत्ती में विभक्त होता है। पौधे का आधारीय भूमिगत भाग जो गुरूत्व केन्द्र की ओर वृद्धि करता है, जड़ होता है। मूल पादप को मिट्टी में जमाए रखती है एवं भूमि से जल एवं आवश्यक खनिज लवणों का अवशोषण कर पौधे की पोषण आवश्यकताओं को पूरा करती है। मूल स्पष्टतः तीन भागों में विभक्त होती है।

अग्र भाग पर टोपीनुमा संरचना मूल गोप, रोम युक्त अवशोषण क्षेत्र एवं वृद्धि क्षेत्र मूलांकुर से बनने वाली प्रथम जड़ प्राथमिक व शेष द्वितीयक होती है।

एक बीज पत्री पादप में अपस्थनिक (Adventitious) मूल होती है। यह पादप की पर्व सन्धियों से उत्पन्न होती है।

मूल के रूपान्तरण (Root Modifications) :

पादपों में विभिन्न कार्यों, जैसे–भोजन संग्रह, सहारा प्रदान करने, श्वसन आदि के लिए मूल विभिन्न प्रकार से रूपान्तरित हो जाती है। इन्हें रूपान्तरित मूल (Modified Root) कहते हैं।

(क) मूसला मूल (Tap Root) के रूपान्तरण :

- **(i) कंदिल (Tubrous)** : भोज्य पदार्थों के अत्यधिक संग्रह के कारण यह फूलकर अनियमित आकार की हो जाती है। उदाहरण–मिरेबिलिस।
- **(ii) कुम्भरूपी (Napi Form)** : यह शीर्ष भाग पर अत्यधिक फूलकर गोलाकार मोटी हो जाती है लेकिन आधार भाग पर एकदम पतली होती है। उदाहरण–चुकन्दर।
- **(iii) शंक्वाकार (Conical)** : ये जड़ें शीर्ष पर फूली होती हैं एवं आधार भाग की ओर वृद्धि करते हुए निरन्तर पतली होती चली जाती हैं। उदाहरण– गाजर।
- **(iv) तर्कू आकार (Fusiform)** : यह मूल बीच में मोटी व शीर्ष एवं आधार भाग की ओर पतली होती है। उदाहरण– मूली।
- **(v) गांठयुक्त मूल (Nodulated Root)** : इस प्रकार की रूपान्तरित मूल में जीवाणु मूल कोशिकाओं के साथ जुड़कर वातावरण की नाइट्रोजन का अवशोषण कर इसे पौधे के लिए आवश्यक नाइट्रेट आदि में बदल देते हैं। इस प्रकार की जड़ें लेग्यूमिनोसी कुल के पादपों में पाई जाती हैं। उदाहरण–लिग्यूमिनोसी कुल के कुछ पादप, जैसे–चना।

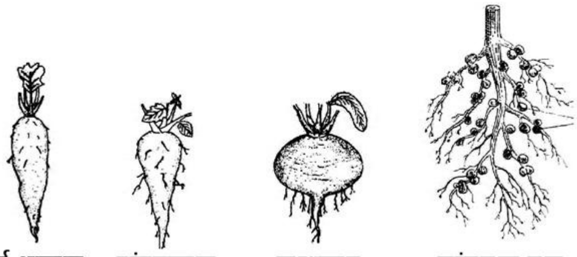

चित्र : मूसला मूल (Tap Root) के विभिन्न रूपान्तरण

(ख) अपस्थनिक मूलों के रूपान्तरणों का अध्ययन :

(i) अवस्तम्भ मूल (Stilt Root) : यह गुच्छों में पैदा होती है। आधारीय पर्व सन्धियों से निकलकर ये मूल मृदा में स्थित हो जाती हैं। इनका कार्य तने को सहारा प्रदान करना है। उदाहरण–मक्का, ईख, बांस, केवड़ा।

(ii) स्तम्भ मूल (Prop Root) :

– ये अपस्थानिक जड़ें तने के साथ समकोण बनाती वायवीय शाखाओं से निकलकर धरती की ओर वृद्धि करती हैं।

– धरती में गढ़कर सह स्तम्भाकार हो जाती हैं व मोटी क्षितिज शाखाओं को साधे रखती हैं।

– इनका मुख्य कार्य टेक देने का होता है। उदाहरण–बरगद।

(iii) गुद्देदार मूल (Fleshy Root) :

– यह मूल भोजन संग्रहण के कारण मोटी एवं अनियमित आकार की हो जाती है।

– आकार के आधार पर यह पुलकित (Fasciculated), हस्ताकार, वलयित एवं मालाकार (Moniliform) प्रकार की होती है।

उदाहरण–एस्पेरेगस (Asparagus), आर्किड (Orchid), शकरकन्द, मैन्गो जिन्जर, आइपिकाक, जंगली अंगूर।

(iv) परजीवी मूल (Parasitic Root) :

– परजीवी पादपों की विशेषता है।

– परपोषी पर लगे परजीवी की पर्व सन्धियों से निकलकर यह मूल परपोषी की कोशिकाओं में घुस जाती है।

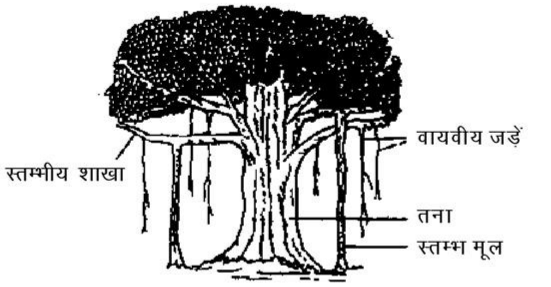

स्तम्भ मूल (बरगद का पेड़)

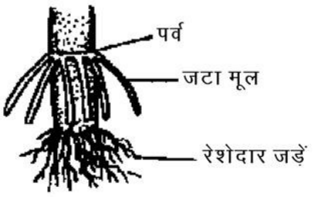

अवस्तम्भ मूल (मक्का)

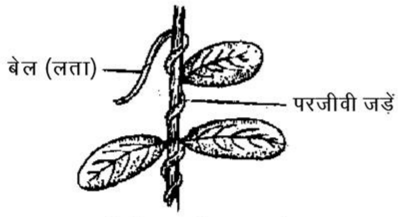

परजीवी मूल (कस्कुटा)

चित्र : अपस्थनिक मूल के विभिन्न रूपान्तरण

- इनका मुख्य कार्य पोषण का अवशोषण कर परजीवी तक पहुंचाना है। इनके शीर्षस्थ भागों पर विशिष्ट रचनाएँ बनती हैं, जिन्हें चुषकांग कहते हैं। उदाहरण–कस्कुटा।

(v) श्वसन मूल (Respiratory Root) :

- यह मूल दलदली पादपों की विशेषता है।
- दलदल में पादप मूल को पूरी ऑक्सीजन नहीं मिल पाती। इसके लिए भूमिगत जड़ों से कुछ मूल ऊपर की ओर वृद्धि कर भूमि से ऊपर निकल आती है।
- इन जड़ों को न्यूमेटोफोर कहते हैं।
- न्यूमेटोफोर में असंख्य सूक्ष्म रन्ध्र उपस्थित होते हैं, जिनके द्वारा गैस विनिमय होता है।

  उदाहरण–राइजोफोरा।

(vi) स्वागीकरण मूल (Assimilatory Root) :

- ये जड़ें पर्व सन्धियों से निकलती हैं।
- हवा में लटकती इन जड़ों में हरितलवक उपस्थित होता है।
- यह प्रकाश संश्लेषण में सक्षम होती हैं। उदाहरण–टिनोस्पोरा।

(vii) अधिपादपी मूल (Epiphytic Root) :

- अधिपादपों में पाई जाती है।
- पर्व सन्धियों से निकलकर हवा में लटकी रहती है।
- सूक्ष्मछिदों के द्वारा वायु से नमी अवशोषित करती है।
- रंगहीन होती है।

  उदाहरण–वांडा।

2. तने के विभिन्न रूपान्तरणों का अध्ययन (Study of Different Modifications of Stem):

तना पादप का आधार बनाता है। तने का विकास भ्रूण के प्राकुर (Plumule) भाग से होता है। तने को इसकी कुछ विशेषताओं के आधार पर आसानी से पहचाना जा सकता है।

1. यह पर्व एवं पर्व सन्धियों में विभक्त होता है।
2. पर्व सन्धियों पर विभिन्न रचनाएँ, जैसे–पर्ण, पुष्प, शाखा एवं फल लगे रहते हैं।
3. यह प्रकाश की ओर (Positive Phototropic) एवं गुरुत्वीय केन्द्र (Gravitational Center) के विपरीत वृद्धि करता है।
4. इसके शीर्ष पर वृद्धि बिन्दू पाया जाता है, जो पणों से संरक्षित रहता है।
5. इस पर बहुकोशिकीय रोम पाये जाते हैं।

विशिष्ट कार्यों को करने के लिए तना विभिन्न प्रकार से रूपान्तरित हो जाता है। इसकी स्थिति के आधार पर तीन प्रकार के मुख्य रूपान्तरण दिखाई देते हैं–

(क) भूमिगत (Under Ground)

(ख) भू-पृष्ठीय (Sub Qurial)

(ग) वायुव (Aerial)

(क) भूमिगत रूपान्तरण :

इस प्रकार का तना भूमि के अन्दर ही वृद्धि करता है। इसके तीन मुख्य कार्य हैं। भोजन संग्रहण, कायिक जनन एवं चिरकालिकता।

(i) कन्द (Tuber) :

- खाद्य पदार्थों के संग्रह के कारण यह अनियमित आकार का गोल अण्डाकार लम्बा अथवा गांठवत होता है।
- इसमें पर्व व पर्व सन्धियां उपलब्ध होती हैं।
- वृद्धि कलिकाएँ पाई जाती हैं, जो पर्ण से ढकी रहती हैं।
- मुख्य कार्य भोजन संग्रहण एवं कायिक जनन होता है।

  उदाहरण–आलू (Potato).

(ii) प्रकन्द (Rhizome) :

- पर्व एवं पर्व सन्धियों में विभाजित है।
- पर्व सन्धियों पर शल्की पर्ण उपस्थित है।
- शीर्ष पर वृद्धि कलिका पाई जाती है।
- भूमि के समानान्तर वृद्धि करता है।

उदाहरण–अदरक (Ginger)

(iii) धनकन्द (Corm) :

- स्तम्भ का आधार भाग भोजन संग्रह के कारण फूलकर अत्यधिक मोटा हो जाता है।
- यह उदग्र प्रकन्द का दबा हुआ रूप प्रतीत होता है।
- पर्व व पर्व सन्धियां उपस्थित हैं।
- भूमि के 90^0 के कोण पर वृद्धि करता है।
- इसका मुख्य कार्य भोजन संग्रहण है।

उदाहरण–जमीकन्द (Amorphophallus)

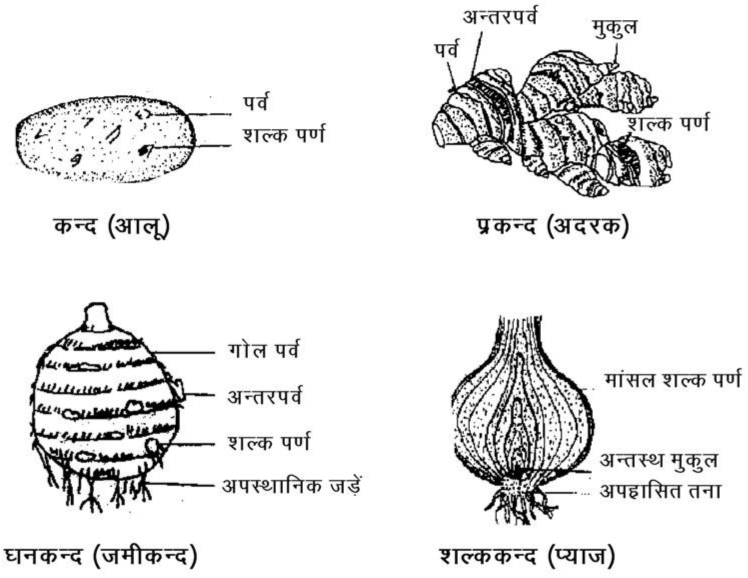

चित्र : तने के भूमिगत रूपान्तरण

(iv) शल्क कन्द (Bulb) :

- यह पूर्ण प्ररोह का रूपान्तरण है।
- स्तम्भ अत्यधिक ह्रासित (Reduce) होकर तस्तरीनुमा बन जाता है।
- इसके आधार भाग से उपस्थानिक मूल एवं शीर्ष भाग से गुद्देदार पर्ण परिवर्धित होती है।
- मुख्य कार्य भोजन संग्रहण होता है लेकिन इसके पर्ण अक्षों में वृद्धि कलिकाओं का निर्माण हो जाता है।

(ख) भू-पृष्ठीय रूपान्तरण :

(i) ऊपरी भूस्तारी (Runner) :

- मुख्य स्तम्भ भूमि के समान्तर वृद्धि करता है।
- मुख्य स्तम्भ की भूमि के सन्निकट स्थित पर्व सन्धियों से शाखाओं का निर्माण होता है।
- शाखाओं के पर्व मुख्य स्तम्भ के पर्वों से अधिक लम्बे होते हैं।
- पूर्व सन्धियों से निरन्तर अपस्थानिक जड़ें एवं प्ररोह निकलते जाते हैं।
  उदाहरण–घास।

(ii) भूस्तारी (Stolen) :

- ऊपरी भूस्तारी के समान ही होता है।
- पूर्व सन्धियां वक्र होती हैं।
- ऊँचे आधार पर सहजता से वृद्धि करते हैं।
  उदाहरण–मार्सिलिया (Marsilea)।

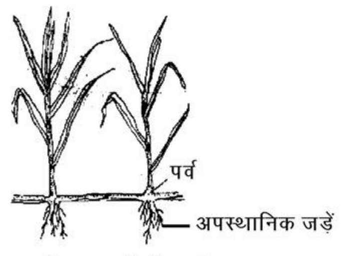

ऊपरी भूस्तारी (घास)

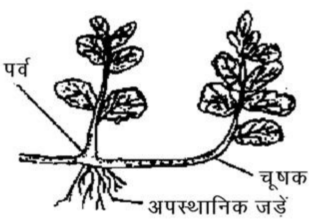

अंतःभूस्तारी (पोदीना)

चित्र : तने के भू पृष्ठीय रूपान्तरण

(iii) भूस्तारिका (Offset) :

- यह रूपान्तरण प्राय जलीय पादपों में पाया जाता है।
- पर्व छोटे होते हैं।
- पर्व सन्धियों से अपस्थानिक मूल एवं प्ररोह निकलता है, जो क्षैतिज स्थित होती है।
- इसका मुख्य कार्य जनन है। प्रत्येक क्षैतिज शाखा एक नये पादप का शीर्ष पर निर्माण करती है।

  उदाहरण–जल कुम्भि (Eichornea)

(iv) अंतःभूस्तारी (Sucker) :

- मुख्य स्तम्भ भूमिगत होता है।
- मुख्य स्तम्भ की पर्व सन्धियों से प्ररोह निकलकर तिरछे वृद्धि करते हैं एवं अन्ततः पर्णिल बन जाते हैं।
- भूमिगत भाग को अन्तःभूस्तारी कहते हैं। यह रंगहीन अथवा बैंगनी रंग का होता है।

  उदाहरण – पोदिना (Mint)

(ग) वायव रूपान्तरण :

(i) स्तम्भ प्रतान (Stem Tendril) :

- स्तम्भ शाखाएँ लम्बी, हरी, कोमल, धागेनुमा संरचना में परिवर्तित हो जाती हैं।
- इसका मुख्य कार्य आरोहण में सहायता प्रदान करता है।
- प्रतान का परिवर्धन वृद्धि कलिका से ही होता है।

  उदाहरण–अंगूर (Grapes)।

(ii) स्तम्भ शूल (Stem Spine)

- मुख्य स्तम्भ की पर्व सन्धियों की शाखाओं वाले स्थान से शूलों का परिवर्धन होता है।
- कई बार इन शूलों पर कालिकाएँ बनती हैं।

  उदाहरण–डूरांटा (Duranta)।
- इनका मुख्य कार्य पादप की रक्षा का होता है।

  उदाहरण–बोगेनविलिया (Bougainvillea)

(iii) पर्णाभ स्तम्भ (Phylloclade) :

- स्तम्भ का यह एक विशिष्ट प्रकार का रूपान्तरण है।
- मरूद्भिदिय पादपों में यह प्रायः दिखाई देता है।
- इस स्तम्भ के पर्ण अत्यधिक ह्रासित (Reduced) होते हैं।

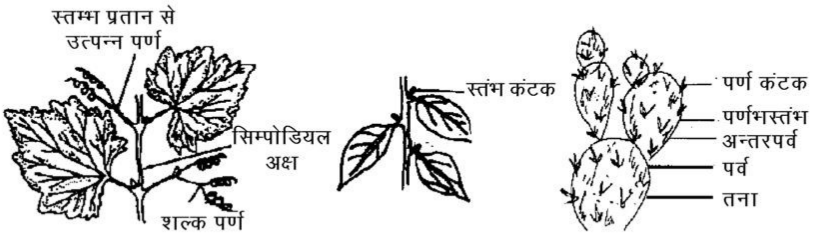

स्तम्भ प्रतान (अंगूर) **स्तम्भ शूल (बोगेन विलिया)** **पर्णाभ स्तम्भ (नागफनी)**

चित्र : तने के वायवीय रूपान्तरण

- रूपान्तरित स्तम्भ हरितलवक की उपस्थिति के कारण हरे रंग का हो जाता है।
- स्तम्भ चौड़ा होकर पर्ण के आकार का हो जाता है एवं प्रकाश संश्लेषण करता है।
- पर्णाभ स्तम्भ पर कलिकाएँ, पर्ण, पुष्प एवं फल पाये जाते हैं।
- यह पर्व एवं पर्व सन्धियों में विभक्त होता है।
- पर्णाभ स्तम्भ की लम्बाई प्रायः एक पर्व की होती है इसलिए इसे पर्णाभ पर्व भी कहते हैं।

3. पर्ण के रूपान्तरण (Leaf Modification) :

कई बार किसी विशिष्ट कार्य को करने के लिए पूर्ण पर्ण अथवा इसका कोई भाग रूपान्तरण द्वारा विशेष संरचनाओं का निर्माण करता है, इन्हें पर्ण रूपान्तरण कहते हैं।

(i) पर्ण शूल (Leaf Spine) :

- इसमें अनुपर्ण सीधे शूलों में रूपान्तरित हो जाते हैं।
- रूपान्तरित अनुपर्णों के दो कार्य होते हैं–वाष्पोत्सर्जन की दर को कम करना एवं रक्षा।

  उदाहरण–नागफनी (opuntia),।

(ii) पर्ण प्रतान (Leaf Tendril) :

- प्रतान एक कोमल हरी धागेनुमा संरचना है।
- यह कमजोर स्तम्भ वाले पादपों के आरोहण में सहायक होती है।
- प्रतान पूर्ण पर्ण, पर्ण शीर्ष व पर्ण वृन्त का रूपान्तरण हो सकता है।

  उदाहरण–जंगली मटर (Lalhyrus Aphaca), स्माईलैक्स (Smilax).

(iii) पर्णाभ वृन्त (Phyllode) :

- पर्ण अत्यधिक ह्रासित हो जाता है।
- पर्ण वृन्त पतला चपटा होकर पर्ण सदृश हो जाता है। इसे पर्णाभ वृन्त कहते हैं।
- पर्णाभ वृन्त प्रकाश संश्लेषण का कार्य करता है।

  उदाहरण–आस्ट्रेलियन आकेशिया।

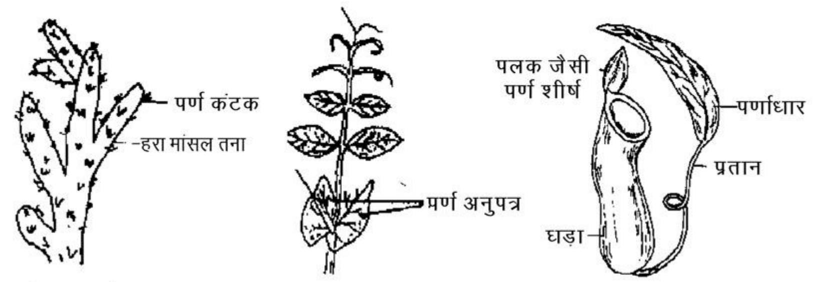

पर्ण शूल (केक्टस)   पर्ण प्रतान (जंगली मटर)   घटपर्णी वृन्त (घट पादप)

चित्र : पर्ण के रूपान्तरण

(iv) घटपर्णी वृन्त (Pitcher) :

- यह कीट भक्षी पादपों में पाया जाने वाला रूपान्तरण है।
- पर्ण घटनुमा हो जाता है।
- घट में प्रोटीन अवशोषित करने वाला द्रव्य भरा रहता है।
- इसके शीर्ष पर स्पर्श संवेदी ढक्कन होता है।

  उदाहरण–यूट्रिक्यूलेरिया (Utricularia)।

मौखिक प्रश्न

प्रश्न–1. सहजीवन क्या है?

उत्तर– यह परस्पर लाभ के लिए संयोजन है जैसे राइजोबियम जीवाणु लेग्यूमिनस पादपों के साथ सहजीवी सम्बन्ध रखता है।

प्रश्न–2. नेपेन्थीस कीटों को क्यों पकड़ते हैं?

उत्तर– ये नाइट्रोजन क्षीण मृदा में उगते हैं, इसलिए नाइट्रोजनयुक्त यौगिकों की प्राप्ति के लिए कीट पकड़ते हैं।

प्रश्न–3. पादपों में प्रतानों तथा कण्टकों की क्या उपयोगिता है?

उत्तर– सुरक्षा एवं आरोहण में सहायक होते हैं। पर्ण कंटक वाष्पोत्सर्जन को कम करने में भी सहायक हैं।

प्रश्न–4. मूसला मूल (Tap Root) क्या है?

उत्तर– मूलांकुर से उत्पन्न मूल मूसला मूल कहलाती है।

प्रश्न–5. अपस्थानिक मूल क्या है?

उत्तर– मूलांकुर के अतिरिक्त पादप के किसी भाग से उत्पन्न मूल को अपस्थानिक मूल कहलाती है।

प्रश्न–6. मीजोफाइट क्या हैं?

उत्तर– सम आवास में उत्पन्न वनस्पति मीजोफाइट कहलाते हैं।

प्रयोग–7

विभिन्न प्रकार के पुष्पक्रमों का अध्ययन

पुष्पीय अक्ष पर पुष्पों की व्यवस्था को पुष्पक्रम, पुष्पों की आधारित अक्ष को पुष्पावली वृन्त एवं एक पुष्प की अक्ष को पुष्प वृन्त कहते हैं। पुष्प का परिवर्धन शीर्षस्थ पार्श्व अथवा दोनों वृद्धि कलिकाओं के द्वारा किया जाता है। स्तम्भ एवं पुष्प की परिवर्धन प्रकृति को आधार बनाकर तीन प्रकार के पुष्प क्रम देखे जा सकते हैं–

(क) असीमाक्षी (Recemose)

(ख) ससीमाक्षी (Cymose)

(ग) विशिष्ट (Special)

(क) असीमाक्षी (Recemose) :

1. मुख्य अक्ष की शीर्षस्थ वृद्धि कलिका पुष्प में रूपान्तरित नहीं होती है इसलिए अक्ष की वृद्धि असीमित होती है।
2. अक्ष पर बहुत से पुष्प लगे होते हैं।
3. तरुण पुष्प शीर्ष पर एवं वयस्क पुष्प आधार भाग पर अवस्थित होते हैं।
4. पुष्प पार्श्व एवं अग्राभिसारी क्रम में लगे रहते हैं। उदाहरण–लार्कस्पर।

(i) असीमाक्ष (Receme) :

1. पुष्पावली वृन्त पर अनेक वृन्तकी पुष्प लगे रहते हैं।
2. पुष्पावली वृन्त की वृद्धि अनिश्चित होती है।
3. पुष्प वृन्त लम्बाई में लगभग समान होता है। उदाहरण–सरसों।

(ii) स्पाइकलेट (Spikelet) :

1. मुख्य अक्ष की निरन्तर वृद्धि होते हुए इस पर अग्राभिसारी क्रम में पुष्प लगे होते हैं।
2. पुष्प अवृन्ती तथा संख्या में कम होते हैं।
3. पुष्प आधार पर बन्ध्य तुष निपत्रों (Glumes) द्वारा घिरे होते हैं। उदाहरण–गेहूँ, घास।

(iii) स्पाइक (Spike) :

1. मुख्य अक्ष लम्बा एवं अशाखित होता है। उदाहरण–विलायती बबूल।

(iv) कैटकिन (Catkin) :

1. यह लटकता हुआ स्पाईक है।
2. पुष्प स्त्री केसरी (Pistillate) या पुंकेसरी (Staininate) दोनों कभी नहीं लगते अर्थात् एकलिंगी होते हैं। उदाहरण–शहतूत।

(v) स्पेडिक्स (Spadix) :

1. एक बड़े सहपत्र (Spathe) द्वारा परिबद्ध होता है।
2. मुख्य अक्ष फूलकर गुदेदार हो जाता है।
3. मादा पुष्प पुष्पावली वृन्त के ऊपरी भाग पर एवं नर पुष्प नीचे के भाग पर अवस्थित होते हैं।

   उदाहरण–क्लेडियम (Cladium), मक्का।

(vi) समशिख (Corymb) :

1. यह असीमाक्षी पुष्प क्रम है।
2. नीचे के पुष्पों के पुष्प वृन्त लम्बे एवं ऊपर के पुष्पों के पुष्पवृन्त छोटे होते हैं।
3. पुष्प वृन्तों की भिन्न लम्बाई के कारण सभी पुष्प एक ही सतह पर दिखाई देते हैं।

   उदाहरण–कैंन्डीटपन्ट।

(vii) पुष्पछत्र (Umbrella) :

1. पुष्प सवृन्त होते हैं।
2. मुख्य अक्ष छोटी होती हैं।
3. सभी पुष्प पुष्पावली वृन्त के शीर्ष से निकलते हैं।
4. पुष्प वृन्तों की लम्बाई समान होने से सभी पुष्प एक धरातल पर नजर आते हैं।

   उदाहरण–हाइड्रोफोटोल, धनिया, सौंफ।

(viii) मुंडक (Capitullum or Head) :

1. पुष्पावली वृन्त हासित, चपटा तस्तरीनुमा।
2. पुष्प अवृन्त एवं सघनरूप से विन्यासित।
3. केन्द्र में तरुण एवं परिधी पर वयस्क पुष्प होते हैं।
4. पुष्प अत्यधिक ह्रासित (Reduce)।

   उदाहरण–सूरजमुखी (Sunflower)

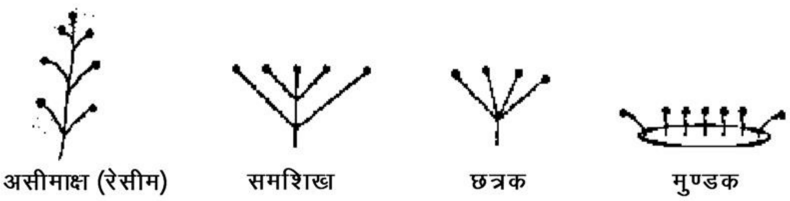

चित्र : असीमाक्षी पुष्पक्रम

(ix) संयुक्त असीमाक्ष (Paride) :

1. पुष्पावली वृन्त शाखित हो जाती है।
2. संयुक्त स्पाइक (Compound Spike)।
3. पुष्पावली की प्रत्येक शाखा एक स्पाइक बनाती है।

(ख) ससीमाक्षी पुष्पक्रम (Cymose) :

1. एक शीर्षस्थ पुष्प के निर्माण के कारण मुख्य अक्ष की वृद्धि रुक जाती है।
2. शीर्ष के नीचे की पर्व सन्धियों से शाखाएँ परिवर्धित होती हैं।
3. प्रत्येक पार्श्व शाखा के शीर्ष पर एक पुष्प का निर्माण होता है।
4. पुष्प तलाभिसारी क्रम में लगे होते हैं।
5. वयस्क पुष्प केन्द्र में एवं तरुण पुष्प परिधी की ओर होते हैं। यह तीन प्रकार का होता है–

   (1) एकल शाखी (Monochasical / Uniqarous)

   (2) द्विशाखी (Dischasical / Biparous)

   (3) बहुशाखी (Polychasical / Multiparous)

(i) एकल शाखी :

1. पुष्पावली वृन्त शीर्षस्थ पुष्प में समाप्त हो जाते हैं।
2. पर्व सन्धि से एकल शाखा निकलती है, जो इसी क्रम की पुनरावृत्ति करती है।
3. शीर्षस्थ पुष्प अपेक्षाकृत वयस्क होता है।

(ii) युग्मशाखित / द्विशाखी :

1. पुष्पावली वृन्त शीर्षस्थ पुष्प में समाप्त हो जाता है।
2. पर्व सन्धि से दो पार्श्व शाखाएँ निकलती हैं।
3. पार्श्व शाखाएँ मुख्य अक्ष के व्यवहार की पुनरावृत्ति करती हैं।

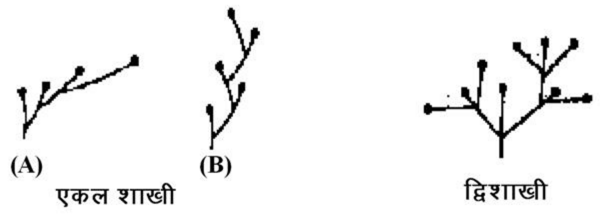

चित्र : ससीमाक्षी पुष्पक्रम

(ग) विशिष्ट पुष्पक्रम :

(i) हाइपेन्थोडियम (Hypanthodium) :

1. मुख्य अक्ष रूपान्तरित होकर एक घटनुमा रचना का निर्माण करता है।
2. घट का शीर्ष भाग एक छोटे छिद्र द्वारा बाहर की ओर खुलता है।
3. घट में पुष्प असीमाक्ष पुष्प क्रम की तरह व्यवस्थित होते हैं।
4. खोखले पुष्पासन की अंतःसतह पर पुष्प लगते हैं।
5. मादा पुष्प आधार की ओर तथा नर पुष्प छिद्र की ओर उपस्थित होते हैं।

उदाहरण–बड़ (Ficus / Bonyan Tree)

(ii) सायथियम (Cyathium) :

1. पुष्पावली वृन्त घटनुमा संरचना में रूपान्तरित हो जाता है।
2. घट के आधार भाग में भीतर की ओर मधु स्रावित करने वाली ग्रंथियां स्थित होती हैं।
3. घट में एकल मादा पुष्प मध्य भाग में एवं चारों ओर बहुत से नर पुष्प परिवर्धित होते हैं।

उदाहरण–यूफोरबिया।

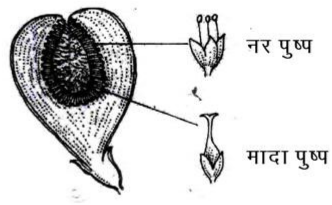

हापेन्थोडियम

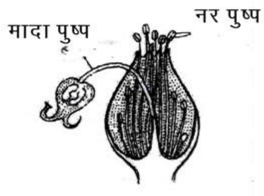

साईथियम

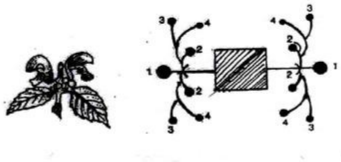

वर्टिसिलास्टर

चित्र : विशिष्ट पुष्पक्रम

(iii) वर्टिसिलास्टर (Verticellaster) :

1. पर्ण के अक्ष में अवृन्त पुष्पों का गुच्छा बनता है।
2. मुख्य अक्ष पुष्प में समाप्त हो जाता है एवं इसकी आधारीय पर्व सन्धि से पार्श्व शाखाएं निकलती हैं।
3. प्रत्येक पार्श्व शाखा पुनः एकल पार्श्व शाखा बनती है।
4. यह क्रम बारम्बार दोहराया जाता है।
5. ये द्विशाखी ससीमाक्ष अथवा वृश्चिकी ससीमाक्ष होते हैं।
   उदाहरण–तुलसी (Ocimum)।

मौखिक प्रश्न

प्रश्न–1. पुष्प क्या है?

उत्तर– पुष्प जनन के लिए रूपान्तरित व संघनित प्ररोह है, जिसमें बाह्यदलपुंज, दलपुंज, पुमंग तथा जायांग पाये जाते हैं।

प्रश्न–2. मातृ अक्ष क्या है?

उत्तर– पुष्प युक्त अक्ष को मुख्य अक्ष या मातृ अक्ष कहते हैं।

प्रश्न–3. संयुक्त पुष्पक्रम से आप क्या समझते हैं?

उत्तर– जब पुष्पक्रम समान क्रम में द्वितीयक शाखाओं में उपस्थित हो।

प्रश्न–4. स्पाइक तथा स्पाइकलेट में क्या अन्तर है?

उत्तर– स्पाइकलेट में कुछ पुष्पों का स्पाइक होता है तथा इसमें छोटे निपत्रयुक्त पुष्प होते हैं, जैसे गेहूँ, मक्का आदि में।

प्रयोग–8

उद्देश्य (Object) : बीज/किशमिश में अन्तःशोषण (Imbibition) क्रिया का अध्ययन।

उपकरण : चने के बीज, किशमिश, वॉच ग्लास एवं पानी इत्यादि।

सिद्धान्त (Principle) : अनेक कार्बनिक पदार्थों में द्रव की काफी मात्रा अवशोषित करने की क्षमता पाई जाती है। कार्बनिक पदार्थ द्रव अवशोषित कर घोल निर्माण नहीं करते हैं। इस घटना को अन्तःशोषण कहते हैं। अन्तःशोषण द्रव पानी अथवा अन्य कोई द्रव हो सकता है। अन्तः शोषण द्वारा अन्तः शोषक (Imbibant) फूल जाता है, परन्तु अन्तः शोषक का आयतन तथा अन्तः शोषित जल का आयतन मिलकर अन्तः शोषण पूर्ण होने पर बने हुए पदार्थ के कुल आयतन से साधारणतः अधिक होता है। यह पानी के अणुओं के अन्तः शोषण की सतह पर ठीक प्रकार से चिपकने के कारण होता है।

विधि : चने के कुछ बीज लेकर वॉच ग्लास में रखो तथा उसमें इतना पानी रख दो कि बीज डूब जायें। बीज कुछ समय तक यथावत् रखो।

परिणाम : कुछ समय पश्चात् बीज फूलना आरम्भ कर देते हैं, और अन्ततः वे फूलकर काफी मोटे हो जाते हैं।

निष्कर्ष :

1. चने के बीज का फूलना बीज के पानी के अवशोषण के कारण होता है।
2. पानी कोशिका के पैक्टिन पदार्थ के हाइड्रोफीलिक प्रकृति के कारण अवशोषित होता है। इसी प्रक्रम को ही अन्तःशोषण कहते हैं।
3. सूखे पदार्थ का विसरण दाब शून्य होता है। इसी कारण पानी विसरण द्वारा बीज में पहुंचना आरम्भ कर देता है।

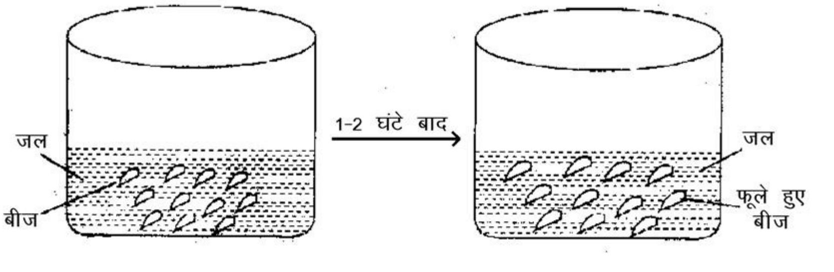

चित्र : अन्तः शोषण प्रक्रिया

सावधानियाँ (Precautions) :

1. बीज शुष्क होने चाहिए।
2. वॉच ग्लास में इतना पानी अवश्य होना चाहिए जिसमें कि बीज पानी में डूबा होना चाहिए।
3. बीज को वॉच ग्लास में 1–2 घंटे तक यथावत् रहने दें।

मौखिक प्रश्न

प्रश्न–1. अन्तःशोषण किसे कहते हैं?

उत्तर– कार्बनिक पदार्थ द्रव अवशोषित कर घोल का निर्माण नहीं करते हैं। इस प्रक्रम को अन्तःशोषण कहते हैं।

प्रश्न–2. बीज अच्छे अन्तःशोषण पदार्थ क्यों माने जाते हैं?

उत्तर– बीज में कॉलाइडी पदार्थों की मात्रा अधिक होने के कारण अच्छे अन्तःशोषण पदार्थ माने जाते हैं।

प्रश्न–3. चने आदि के बीजों से भरे कमरे के बीजों को पानी से तर करके चारों ओर से बन्द रखने पर कमरे की दीवार का क्या होगा?

उत्तर– दीवार व छत फट सकती है।

प्रश्न–4. पादप जीवन में अन्तःशोषण का क्या महत्त्व है?

उत्तर– पादपों में अन्तःशोषण बीजांकुरण, मृदा से जल ग्रहण करने तथा कोशिका से कोशिका में जल के गमन में सहायक हैं।

प्रयोग–9

उद्देश्य (Object) : निम्न सैट किये गए उपकरणों के प्रयोग का अवलोकन/लक्षण लिखें– (क) अनाक्सीश्वसन, (ख) प्रकाश अनुवर्तन, (ग) अग्रस्थ कलिका हटाना, (घ) वाष्पोत्सर्जन अपकर्ष का प्रदर्शन।

(क) उद्देश्य : अनाक्सीश्वसन का प्रदर्शन

उपकरण : मटर, चना या सेम का अंकुरित बीज, मरकरी, KOH गोलियां रखने वाली ढक्कन युक्त बोतल, चिमटियां, छोटा बीकर या कठोर कांच की गहरी पैट्री डिश, कठोर कांच की परखनली।

सिद्धान्त (Principle) : यह श्वसन का वह प्रकार है जिसमें ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में कार्बनिक पदार्थों का अपूर्ण विघटन होता है, जिसके फलस्वरूप CO_2 व हानिकारक पदार्थ एथिल एल्कोहल का निर्माण होता है तथा ऊर्जा कम बनती है।

अनॉक्सी श्वसन का समीकरण : $C_6H_{12}O_6 \longrightarrow 2CO_2 + C_2H_5OH +$ ऊर्जा (28 K.Cal.)

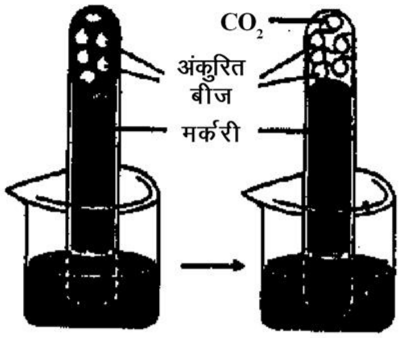

चित्र : अनॉक्सी श्वसन का प्रदर्शन

विधि : मटर, सेम या चने के अंकुरित बीजों का बीजावरण निकालें। कठोर कांच के छोटे बीकर को पारे (मरकरी) से आधा भरें। क्रमागत से पैट्री डिश भी प्रयुक्त की जा सकती है। कठोर कांच की परखनली को पारे के साथ 5/6 भाग तक भरें। इसके ऊपर छिला हुआ अंकुरित बीज रखें। परखनली के मुख को अंगूठे से बन्द करें। बन्द मुख के साथ परखनली को उल्टा करके ऊर्ध्वाधर रूप से पारा को आधे भरे बीकर में रखें। छिला हुआ बीज परखनली के ऊपरी किनारे

की ओर बढ़ता है। अंगूठे को सावधानी से पारे में डूबी हुई परखनली के मुख से हटाएं। परखनली को विश्रामावस्था में रखें।

एक घंटे बाद निरीक्षण करें। चिमटी की सहायता से परखनली में सावधानी से KOH की गोलियां डालें। इसके लिए परखनली को उसके पारे में डूबे हुए मुख के साथ हल्का-सा उठाएं। यह ऊपरी छोर की ओर बढ़ता है। 5-10 मिनट के बाद निरीक्षण करें।

अवलोकन (Observation) :

1. उपकरण सेट होने के आधे घंटे बाद अवलोकन करने पर यह पाया जाता है कि परखनली में पारे का स्तर गिर जाता है। प्रत्यक्ष रूप से कुछ गैस वहां एकत्रित हो जाती है।
2. KOH की गोली को डालने के बाद, पारे का स्तर दुबारा बढ़ जाता है व सम्पूर्ण परखनली को भर देता है।

परिणाम :

1. चूंकि परखनली प्रयोग के आरम्भ में पारे व बीजों से भरी होती है, इसलिए इसमें वायु नहीं होती है। अंकुरित बीज ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में CO_2 मुक्त करते हैं। यह एक अनॉक्सीश्वसन की प्रक्रिया है।
2. उत्सर्जित CO_2 के कारण परखनली में पारे का स्तर गिर जाता है।
3. इस CO_2 को KOH द्वारा अवशोषित कर लिया जाता है, जिसके कारण परखनली में पारे का स्तर बढ़ जाता है।

सावधानियाँ (Precautions) :

1. परखनली व बीकर दोनों कठोर कांच के बने होने चाहिए व बिना दरार वाले होने चाहिए।
2. प्रयोग के पहले बीज को कई घंटों के लिए भिगो देना चाहिए।
3. गैस की तीव्र मुक्ति के लिए बीजावरण हटा देना चाहिए।
4. हाथ से KOH गोली को नहीं छूना चाहिए।

(ख) उद्देश्य : पौधे में प्रकाशानुवर्तन के प्रदर्शन हेतु प्रायोगिक उपकरण तैयार करना तथा दिये गए प्रश्नों का उत्तर देना।

आवश्यक सामग्री : गमले में लगा पौधा, अन्दर की ओर काला रंग किया हुआ बक्सा, जिसकी एक दीवार पर एक आयताकार छिद्र या खिड़की हो।

सिद्धान्त (Principle) : पौधे का तना हमेशा प्रकाश की दिशा में मुड़कर वृद्धि करता है, जिसे धनात्मक प्रकाशानुवर्तन कहते हैं। तने का इस प्रकार प्रकाश की ओर मुड़ना उसके दोनों ओर वृद्धि की असमान दर का परिणाम है।

विधि (Procedure) : गमले में लगा एक सक्रिय वृद्धि वाला पौधा लें। इस पौधे को अन्दर की ओर काला रंग किये हुए बक्से में जिसकी एक दीवार पर एक आयताकार छिद्र या खिड़की हो, रख दें। बक्से को इस प्रकार की स्थिति में रखें कि सूर्य का प्रकाश छिद्र से होकर अन्दर की ओर प्रवेश करता रहे। 3-4 दिन बाद पौधे का अवलोकन करें।

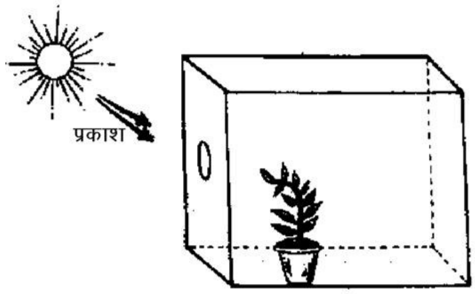

चित्र : प्रकाशानुवर्तन का प्रदर्शन

निरीक्षण (Observation) : 3-4 दिन बाद आप देखेंगे कि पौधे का तना उस दिशा में मुड़कर वृद्धि करने लगा है, जिस दिशा से प्रकाश अन्दर की ओर आ रहा है।

निष्कर्ष : एक ओर से मिले प्रकाश के कारण उसी दिशा में हुई तने में वृद्धि को धनात्मक प्रकाशानुवर्तन कहते हैं। पार्श्वीय प्रकाश देने के कारण तने का उसी दिशा में झुकना, प्रकाश द्वारा ऑक्सीन हार्मोन के वितरण को प्रभावित करने के कारण हुआ। तने के छाया वाले आधे भाग में प्रकाश वाले आधो भाग की अपेक्षा ऑक्सीन की मात्रा अधिक हो जाती है। ऑक्सीन पादप वृद्धि को प्रेरित करता है। जिस कारण छाया वाले आधे भाग में प्रकाश वाले भाग की तुलना में अधिक वृद्धि होने के कारण तना पार्श्वीय दिशा से आ रहे प्रकाश की ओर मुड़ जाता है।

सावधानियाँ (Precautions) :

1. पौधा छोटा व सक्रिय वृद्धि वाला होना चाहिए।
2. आयताकार छिद्र या खिड़की के अलावा कहीं से भी प्रकाश बॉक्स में प्रवेश नहीं करना चाहिए।
3. बक्से के आयताकार छिद्र को प्रकाश आने की दिशा की ओर रखना चाहिए।
4. गमले में लगे पौधे का ही प्रयोग करें।

(ग) उद्देश्य : शीर्षस्थ कलिका को हटाना।

आवश्यक सामग्री (Essential Requirements) : दो गमलों में लगे पौधे, चाकू, जल।

विधि (Procedure) :

1. एक ही प्रजाति के लगभग समान आकार के दो गमलों में लगे पादप लें।
2. गमलों युक्त पादपों को 'अ' तथा 'ब' से चिन्हित करें।
3. गमले 'ब' में लगे पादप की शीर्षस्थ कलिका को चाकू की सहायता से सावधानी पूर्वक हटा दें।
4. अब इन दोनों गमलों के पादपों को कुछ दिनों तक खुला रख दें तथा नियमित रूप से जल से सींचित करते रहें। कुछ दिनों बाद पौधों का अवलोकन करें।

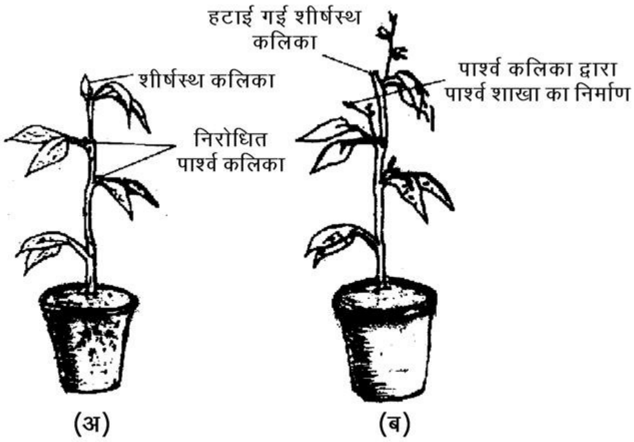

चित्र : शीर्षस्थ कलिका का हटाना (शीर्ष प्रमुखता का प्रदर्शन)

परिणाम : पादप 'ब' की शीर्षस्थ कलिका को हटाने के कारण इसकी पार्श्व कलिकाएँ तेजी से वृद्धि करती हैं तथा पौधा झाड़ी समान हो जाता है। पादप 'अ' (जिसकी शीर्ष कलिका को नहीं हटाया) सीधी स्थिति में वृद्धि करता है तथा पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि कम होती है। पादपों में शीर्ष कलिका में उपस्थित वृद्धि हार्मोन पार्श्व कलिकाओं की वृद्धि को रोकते हैं, इसे शीर्ष प्रमुखता कहते हैं।

सावधानियाँ :

1. गमलों में लगे दोनों पादप लगभग समान आकार के होने चाहिए।
2. पौधे एक ही प्रजाति के होने चाहिए।
3. पौधों को नियमित रूप से जल से सींचित करें।

(घ) उद्देश्य : वाष्पोत्सर्जन अपकर्ष का प्रदर्शन

उपकरण : एक लम्बी, पतली तथा मजबूत नलिका, ताजी कटी पत्ती युक्त टहनी, जो जल में डूबी हो, रबर नलिका, कोमल तार, वायु निषिबद्ध जल (उबला एवं ठण्डा किया हुआ), पारा, बीकर, स्टेण्ड।

विधि : 3-5 सेमी. लम्बी रबर नलिका को कांच की नली के एक सिरे पर स्थित कर देते हैं। दोनों में वायु निषिद्ध जल भर देते हैं। अब कांच की नली के स्वतन्त्र सिरे को अपनी उंगली से दबाकर बन्द कर देते हैं। जल में डुबोकर काटी गई ताजी टहनी को रबर नलिका में प्रवेश कराते हैं। प्रवेश की जाने वाली दूरी 2—3 से.मी. तक होनी चाहिए। कोमल तार द्वारा जोड़ वाले स्थानों को भली प्रकार बांध देते हैं। नली के बन्द किये गए सिर को पारे से भरे बीकर में डुबो देते हैं। जैसे ही स्वतन्त्र सिरा पारे में डूबता है, धीरे से उंगली हटा लेते हैं। अब नलिका को स्टैण्ड द्वारा उर्ध्व रूप से स्थिर कर देते हैं। अब इस उपकरण को खुले स्थान या पंखे के नीचे रख देते हैं।

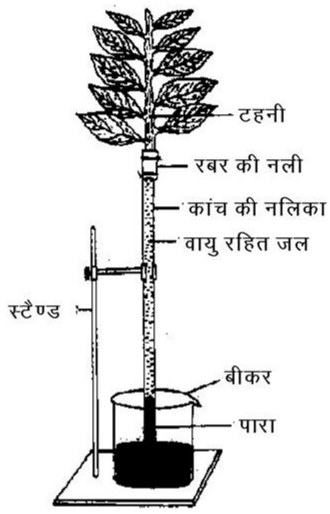

चित्र : वाष्पोत्सर्जन अपकर्ष प्रदर्शन प्रयोग

निरीक्षण (Observation) : थोड़ी देर बाद पारा नली में ऊपर चढ़ने लगता है और जल स्तर कम होने लगता है।

निष्कर्ष : प्ररोह जल अवशोषित करता है, क्योंकि यह वाष्पोत्सर्जन क्रिया जल की कुछ मात्रा बाहर निकालता है। वाष्पोत्सर्जन एक प्रकार चूषक दाब या अपकर्ष उत्पन्न करता है। इसी

अपकर्ष के कारण जल स्तर कम आता है तथा पारे की सतह ऊपर उठती है। वाष्पोत्सर्जन अपकर्ष का मान अत्यधिक उच्च होता है, क्योंकि पारा जल से 13.6 गुना अधिक भारी होता है। जल का संसंजन बल अधिक होने के कारण जल स्तम्भ, पारे के ऊपर चढ़ने के बाद भी नहीं टूटता है।

सावधानियाँ (Precautions) :

1. केवल ताजे प्ररोह का चुनाव करना चाहिए।
2. प्ररोह को जल के अन्दर रखकर काटना चाहिए।
3. प्ररोह का कटा हुआ सिरा प्रयोग में लाने से पूर्व जल में डुबोकर ही रखना चाहिए।
4. जल वायुरहित होना चाहिए।
5. रबर नलिका को, कांच नलिका में जल डालने से पहले स्टैण्ड द्वारा स्थिर कर लेना चाहिए।
6. जोड़े गए स्थान वायुरूद्ध होने चाहिए।

मौखिक प्रश्न

प्रश्न–1. वाष्पोत्सर्जन कितने प्रकार की होती है?

उत्तर– वाष्पोत्सर्जन तीन प्रकार की होती है : रंध्रीय वाष्पोत्सर्जन, उपत्वचीय वाष्पोत्सर्जन तथा वातरंध्रीय वाष्पोत्सर्जन।

प्रश्न–2. शीर्ष प्रमुखता क्या है?

उत्तर– शीर्ष कलिका की उपस्थिति के कारण पार्श्व शाखाओं की वृद्धि निरोधन शीर्ष प्रमुखता कहलाता है।

प्रश्न–3. जल रन्ध्र कहाँ स्थित होते हैं?

उत्तर– पत्तियों के किनारे होते हैं?

प्रश्न–4. प्रकाश संश्लेषण क्या है?

उत्तर– हरे पौधे द्वारा प्रकाश की उपस्थिति में वायुमण्डल से CO_2 तथा भूमि से जल लेकर कार्बोहाइड्रेट का निर्माण करना प्रकाश संश्लेषण कहलाता है।

प्रयोग–10

उद्देश्य (Object) : मानव कंकाल तथा जोड़ों की पहचान।

मानव में कंकाल तंत्र : मानव में कंकाल के दो भाग हैं–

(a) अक्षीय कंकाल (Axial skeleton), (b) अनुबन्धी कंकाल (Appendicular)।

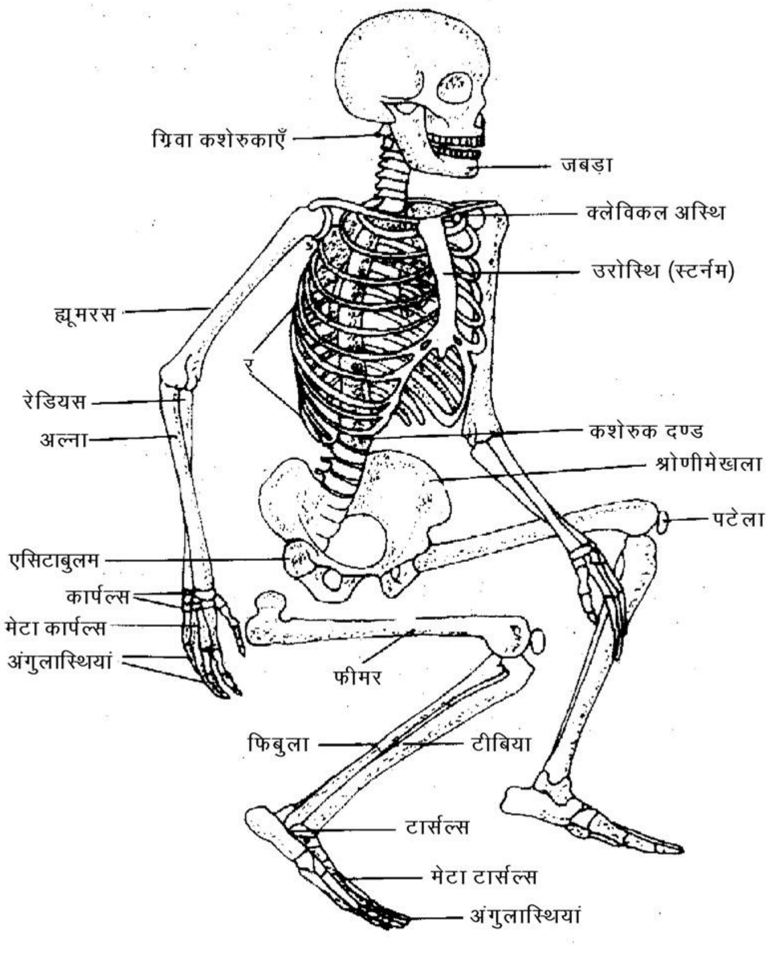

चित्र : मानव कंकाल तंत्र

I. अक्षीय कंकाल (80 अस्थियां) :

वह कंकाल जो मध्य अक्षीय भाग या शरीर के लम्बवत् अक्ष में होता है, अक्षीय कंकाल कहलाता है। यह निम्न भागों का बना होता है–

1. खोपड़ी (Skull)–सिर।
2. कशेरूक दंड (Vertebral Column)–गर्दन तथा धड़ के पृष्ठ भाग पर।
3. उरोस्थि (Sternum)–वक्ष में आगे मध्यक रेखा में स्थित।
4. पसलियां (Ribs)–वक्ष में पार्श्व में स्थित।

क्र.सं.	क्षेत्र	अस्थियों की संख्या			
1.	करोटि (Skull)	कपाल (Cranium)	8	29	80
		चेहरा (Face)	14		
		कर्ण अस्थिकाएँ (Ear-ossicle)	6		
		कंठिका अस्थि (Hyoid)	1		
2.	कशेरुकदण्ड (Vertebral Column)	कशेरुकाएँ (Vertebrae)	26		
3.	वक्ष (Thorax)	उरोस्थि (Sternum)	1	25	
		पसलियाँ (Ribs)	24		

II. अनुबन्धी कंकाल : यह कंकाल पार्श्व में स्थित होता है तथा अक्षीय कंकाल से जुड़ा होता है। इसके दो भाग हैं–मेखला (Girdles) तथा पाद अस्थियाँ (Limb Bones)।

क्र.सं.	क्षेत्र	अस्थियाँ	अस्थियों की संख्या	
01.	अग्रपाद (Fore Limb)	अंसमेखला (Pectoral Girdle)	04	126
		भुजाएँ एवं हाथ (Arms and Hands)	60	
02.	पश्चपाद (Hind Limb)	श्रोणिमेखला (Pelvic Girdle)	02	
		टाँगें और पैर (Lags and Feet)	60	

I. अक्षीय कंकाल :

1. करोटि (29 अस्थियाँ) : यह सिर में स्थित होती हैं तथा कठोर अस्थियों की बनी होती हैं। इनमें कपाल (Cranium), चेहरे की अस्थियां (Facial bones), कंठिका अस्थि (Hyoid) तथा कर्ण अस्थियां (Ear bones) शामिल हैं।

(i) कपाल (Cranium) (मस्तिष्क आवरण, 8 अस्थियां)–ये निम्न हैं–

(a) फ्रंटल–1, (b) मध्यकपाल (Parietal)–2, (c) स्फीनॉयड–2, (d) एथमॉयड–1, (e) टेम्पोरल–2, (f) अनुकपाल (Occipital)–यह अस्थिमय रचना है, जिसमें मस्तिष्क होता है और इस रचना द्वारा मस्तिष्क की रक्षा होती है।

(ii) चेहरे की अस्थियाँ (Facial Bones-14)–14 चेहरे की अस्थियां क्रेनियम के अंतःभाग में स्थित होती हैं। ये निम्न हैं–

(a) नासास्थियाँ–2, (b) मैक्सिली–2, (c) गंड अस्थियाँ (Zygomatic)–2, (d) लैक्राइमल–2, (e) पैलेटाइन–2, (f) निचली नासा कॉन्की–2, (g) सीरिका (Vomer)–1, (h) मैन्डिबल–1।

(iii) कंठिका अस्थि (Hyoid bone)–(जिह्वा अस्थि Tongue bone-1)–यह जीभ के नीचे तथा स्वरयंत्र (larynx) के ऊपर होती हैं।

(iv) कर्ण अस्थिका (Ear ossicle)–संख्या–6, मेलियस–2, इनकस–2, स्टाइपीज (Stapes)–2।

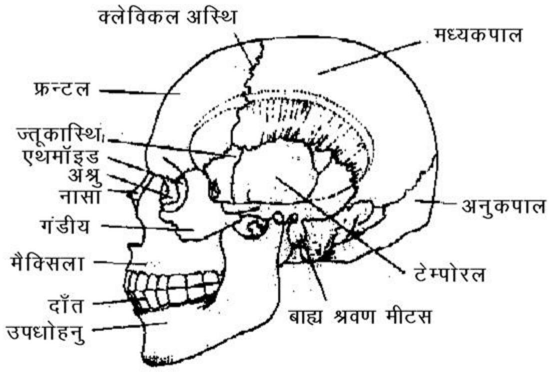

चित्र : मानव करोटी

करोटि (Skull) के लक्षण :

1. कपाल 8 अस्थियों का बना है।
2. कपाल अस्थियां लहरदार सीवनों (Wavy sutures) द्वारा एक-दूसरे से जुड़ी रहती हैं।
3. करोटि में महारंध्र (Foramen magnum) है जो मार्ग का कार्य करता है।
4. करोटि में जबड़े का निचला हिस्सा गतिमान है।

2. कशेरुक दण्ड (Vertebral Column) :

लक्षण : मानव के कशेरूक दंड के निम्न लक्षण हैं–

1. यह लगभग 70 cm लम्बा, हल्का सा मुड़ा होता है ताकि शक्ति और संतुलन बना रहे।
2. इसके मुड़े हिस्से–प्रारूपीग्रीवा (Cervicall), वक्षीय (Thoracic), कटि (Lumber) और त्रिक (Sacrum) हैं।
3. मानव शिशु की कशेरुक दण्ड में कशेरुकाओं की संख्या 33 होती है–ग्रीवा–7, वक्षीय–12, कटि–5, त्रिक–5 तथा कॉक्सिजीयल–4।
4. 5 त्रिक अस्थियां तथा 4 कॉक्सिजीयल कशेरुक युग्मित होकर एक संयुक्त सैक्रम तथा कॉक्सिक बनाती हैं।
5. वयस्क मनुष्य की कशेरुक दण्ड में 24 कशेरुकाएँ, एक सैक्रम और एक कॉक्सिक मिलकर कुल 26 कशेरुकाएँ होती हैं।

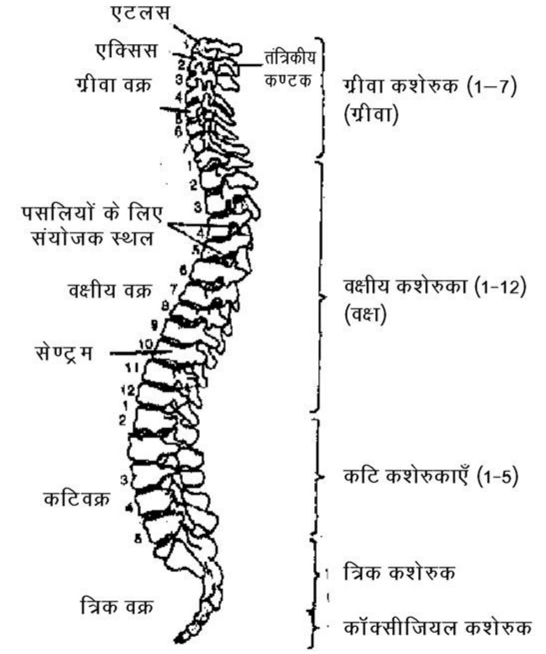

चित्र : कशेरुक दण्ड

प्रारूपी कशेरुक के लक्षण :

शीर्षधर के लक्षण (Features of Atlas) :

1. यह प्रथम ग्रीवा कशेरुक है, जो करोटि को सहारा प्रदान करता है।
2. सेन्ट्रम अनुपस्थित है।
3. ऊपरी सतह पर दो गड्ढे हैं जो अनुकपाल अस्थिकंद से संधि के लिए हैं।
4. तंत्रिकीय नाल अनुप्रस्थ स्नायु द्वारा विभाजित होती है।
5. अनुप्रस्थ प्रवर्ध लम्बे हैं।

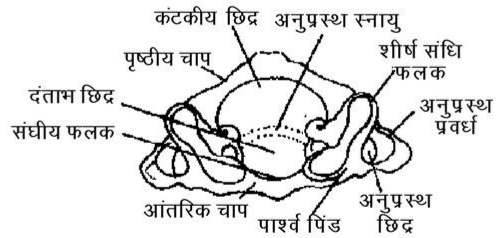

चित्र : एटलस कशेरुक

अक्षीय कशेरुक के लक्षण (Features of Axis) :

1. यह दूसरी ग्रीवा कशेरुक है।
2. सेन्ट्रम अगर्ती है।
3. दंताभ प्रवर्ध (Odontoid Process) एटलस के रिंग में जुड़ा है।
4. यह एटलस को घूमने के लिए गड्ढा बनाता है।
5. छोटे अनुप्रस्थ प्रवर्ध उपस्थित हैं।

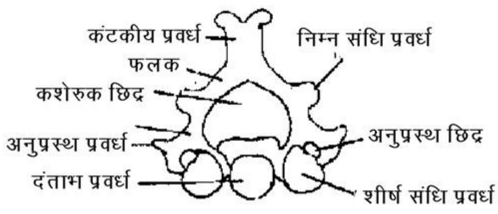

चित्र : अक्षीय कशेरुक

प्ररूपी ग्रीवा कशेरुक के लक्षण (Features of Typical Cervical Vertebrae) :

1. लम्बी तंत्रिका कंटक (Neural Spine)।
2. कोलियस सेन्ट्रम उपस्थित।
3. लम्बे अनुप्रस्थ उभार उपस्थित।
4. कशेरुक नाल उपस्थित।

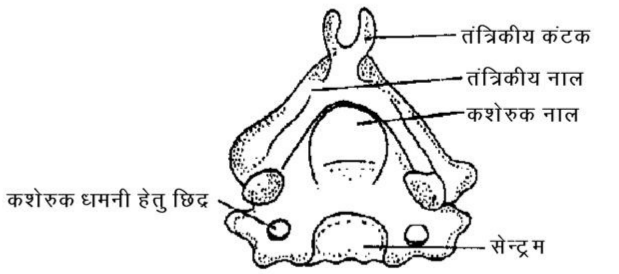

चित्र : प्ररूपी ग्रीवा कशेरुक

वक्षीय कशेरुक के लक्षण (Features of Thoracic Vertebrae) :

1. लम्बी अनियमिताकार सेन्ट्रम उपस्थित।
2. तंत्रिका कंटक चपटी, लम्बी तथा पीछे की ओर।
3. तंत्रिकाचाप रिक्त स्थानों के चारों ओर है। तंत्रिकीय गुहा उपस्थित।

4. इसमें अग्र संधि, निम्न संधि तथा अनुप्रस्थ उभार हैं।
5. सेन्ट्रम में पसलियों से संधि के लिए मुखिकाएं हैं।

चित्र : अग्र वक्षीय कशेरुक

कटि कशेरुक के लक्षण (Features of Lumbar Vertebrae) :

1. इनकी संख्या 5 है तथा उदर के नीचे के क्षेत्र में है।
2. सेन्ट्रम अगर्ती है।
3. तंत्रिका कंटक बड़े तथा स्पष्ट हैं।
4. अनुप्रस्थ प्रवर्ध लम्बे होते हैं।

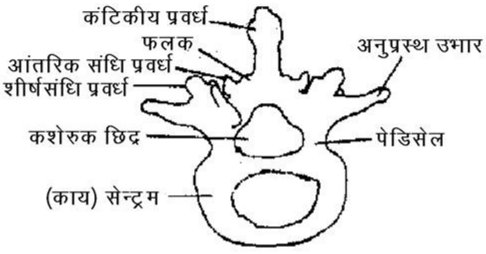

चित्र : कटि कशेरुक

सैक्रम तथा अनुत्रिक के लक्षण (Features of Sacrum and Coccyx) :

सैक्रम :

1. यह 5 कशेरुकों का संयुग्मन है।
2. अनुप्रस्थ प्रवर्ध चौड़े तथा तिरछे हैं।
3. स्त्रियों में सैक्रम छोटा तथा चौड़ा है।
4. सैक्रम गुहा सैक्रल कशेरुकी छिद्र द्वारा निर्मित है।

कॉक्सिक :

1. 4 कशेरुकों का संयुग्मन है।
2. यह तिकोनी है।
3. यह रीढ़ की हड्डी की पूंछ है।
4. अनुप्रस्थ प्रवर्ध अविकसित हैं।

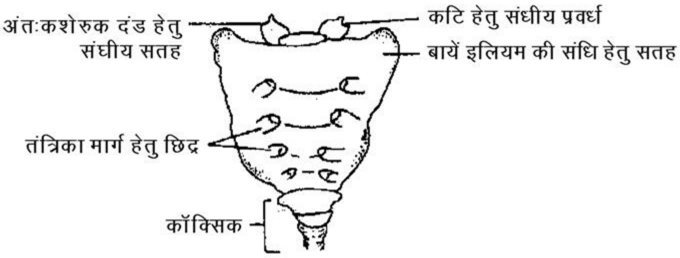

चित्र : सैक्रम तथा कॉक्सिक

3. उरोस्थि (Sternum) :

1. यह छाती का मध्य भाग लगभग 17 cm लम्बा होता है।
2. ऊपरी भाग पूर्व उरोस्थि (Manubrium), मध्य भाग चपटा तथा कार्टिलेज युक्त तथा निचला भाग जिफॉयड प्रवर्ध है।

4. पसलियाँ (Ribs) :

1. ये मुड़ी हुई छड़ाकार अस्थियां हैं जो पश्च में 12 जोड़ी वक्षीय कशेरुकाओं से तथा सामने उरोस्थि से संधि करती हैं।
2. इनकी संख्या 12 जोड़ी है।
3. प्रत्येक पसली में स्टर्नल तथा कशेरुक भाग हैं।
4. प्रत्येक पसली में सिर, ट्यूबरकल, ग्रीवा, शैफ्ट तथा कॉस्टल कार्टिलेज हैं।

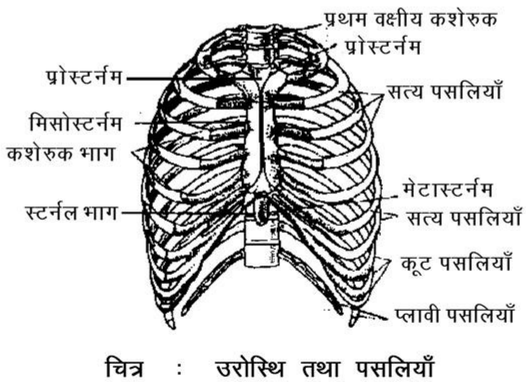

चित्र : उरोस्थि तथा पसलियाँ

II. अनुबंधी कंकाल :

मेखलाएँ (Girdles) : ये दो हैं–अंस मेखला (Pectoral Girdle) तथा श्रोणि मेखला (Pelvic Girdle)।

अंस मेखला : ये एक जोड़ी तथा शरीर के ऊपरी भाग में स्थित होती हैं। प्रत्येक में दो अस्थियां–क्लेविकल एवं स्कैपुला होती हैं। क्लेविकल *f* के आकार की, पतली, लम्बी तथा भीतर स्टर्नम छोर से संधि करती है। बाहर की ओर यह एक्रोमियन छोर पर स्कैपुला से संधि करती है। इसे कॉलर बोन भी कहते हैं। स्कैपुला चपटी, पतली, वक्र, तिकोनी अस्थि हैं, जिसमें ग्लिनॉयड गुहा होती है, जिसमें ह्यूमरस अस्थि का सिर संस्थित रहता है।

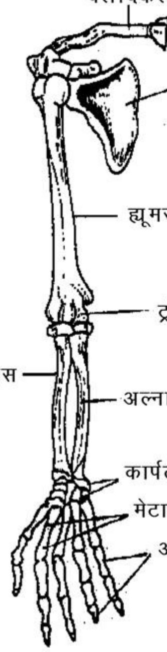

चित्र : अंसमेखला तथा अग्र पाद

अग्रपाद (Fore Limb) : वक्षीय क्षेत्र में एक जोड़ी अग्र पाद अस्थियां हैं। प्रत्येक में 30 अस्थियां 3 भागों में विभाजित हैं। ये निम्न हैं–ऊपरी भाग, अग्र भाग तथा हाथ।

(a) ऊपरी भुजा–ह्यूमरस, (b) अग्र भुजा–रेडियो-अलना, (c) हाथ–कार्पल्स, मेटाकार्पल्स तथा फैलेन्जेज (अंगुलास्थियां)। रेडियस अस्थि अलना से छोटी है। ये दोनों एक-दूसरे से तथा ह्यूमरस से जुड़ी रहती हैं।

श्रोणि मेखला (Pelvic Girdle) : चाप के आकार की एक जोड़ी कूल्हा अस्थियाँ निचले उदर क्षेत्र में होती हैं। ये अनामी अस्थियों (Innominate Bones) की बनी हैं। अनामी अस्थियाँ इलीयम तथा प्यूविस के मिलने से बनती हैं। अनामी अस्थि की बाहरी सतह में एक गर्त श्रोणि उलूखल (Acetabulum) होती हैं, जिसमें फीमर का सिर भाग संस्थित रहता है। श्रोणि उलूखल के नीचे अनामी अस्थि में एक छिद्र होता है, जिसे ऑब्ट्यूरेटर छिद्र कहते हैं।

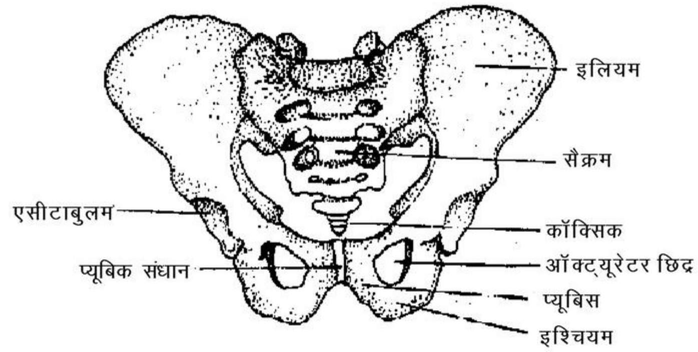

चित्र : श्रोणि मेखला

पश्च पाद (Hind Limb)–प्रत्येक पश्चपाद में 30 अस्थियाँ तीन समूहों में विभाजित होती हैं–(a) जंघे–फीमर, (b) पिंडली–टिबिया तथा फिबुला, (c) पैर–टार्सल्स, मेटाटार्सल्स तथा अंगुलास्थियां।

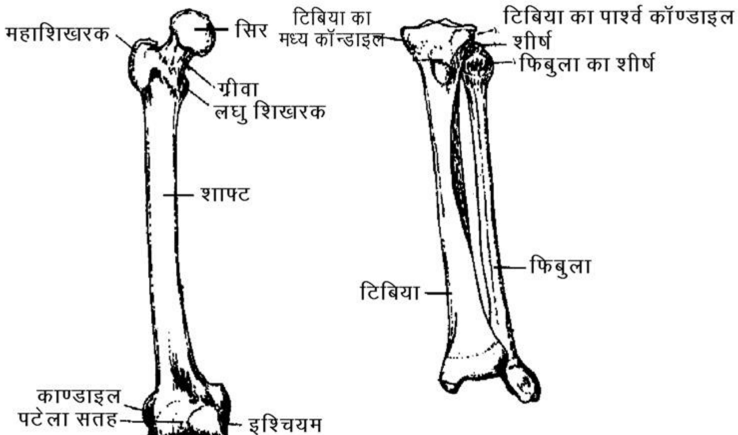

चित्र : पश्च पाद अस्थियाँ

सन्धियाँ (Joints) : कंकाल तंत्र में उन स्थानों को सन्धि कहते हैं, जहां दो या दो से अधिक अस्थियां जुड़ी रहती हैं और हिल-डुल सकती हैं। अन्य शब्दों में, दो या अधिक अस्थियों के मध्य या अस्थि एवं उपास्थि के मध्य सम्पर्क स्थल को संधि कहते हैं। सन्धियाँ तीन प्रकार की होती हैं–

1. अचल या स्थिर संधियां (Fixed or Immovable Joints) : ये गति नहीं करतीं क्योंकि अस्थियां दृढ़ कैलोजन तंतुओं से बंधी रहती हैं। इन संधियों को सीवन (Sutures) भी कहते हैं। ये करोटि तथा दांतों की संधि में होती हैं।

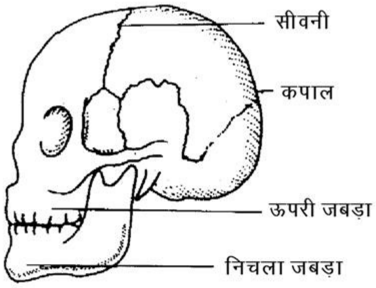

चित्र : अचल संधि

2. उपास्थिसम या अल्पगतीय संधियाँ (Cartilaginous or Slightly Movable Joints) : फाइब्रोकार्टिलेज के बने (प्रत्यास्थ) गड्ढे अस्थियां को अलग करते हैं। ये गड्ढे संधियों को हल्की गति प्रदान करते हैं। ऐसे जोड़ संधानक (Symphysis) कहलाते हैं। इसी के कारण हम अपनी रीढ़ की हड्डी तथा जोड़ों को एक सीमा तक घुमा सकते हैं। इस प्रकार की संधि कशेरुकों के मध्य, प्यूबिक संधान तथा पसलियों एवं स्टर्नम के मध्य पाई जाती है।

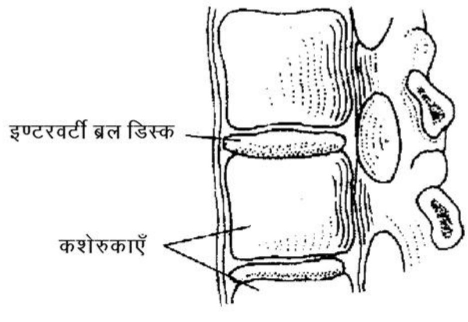

चित्र : कार्टिलेज या अल्प गतीय संधि

3. साइनोवियल या चल संधियां (Synovial or Freely Movable Joints) : ये पाद अस्थियों के बीच होती है। कार्टिलेज इन्हें चिकनी तथा लचीली सतह प्रदान करता है ताकि घर्षण कम हो। गति के दौरान दो अस्थियों के बीच की रगड़ को साइनोवियल द्रव द्वारा रोका जाता है। यह द्रव साइनोवियल झिल्ली द्वारा स्रावित होता है। साइनोवियल संधियाँ निम्न हैं–

(a) कन्दुक खल्लिका संधि (Ball and Socket Joint)
(b) कब्जा संधि (Hinge Joint)
(c) एंगुलर संधि (Angular Joint)
(d) विसर्पी संधि (Gliding Joint)
(e) धुराग्र संधि (Pivot Joint)
(f) सैंडिल संधि (Sadlle Joint)।

(a) कन्दुक खल्लिका संधि (Ball and Socket Joint) : एक अस्थि का कन्दुक जैसा सिरा दूसरी अस्थि के गड्ढे या खल्लिका में फिट हो जाता है। जैसे–कंधे तथा कूल्हे की संधि। इस संधि द्वारा फैलाव, मोड़ना तथा घुमाना आदि गतियाँ हो सकती हैं।

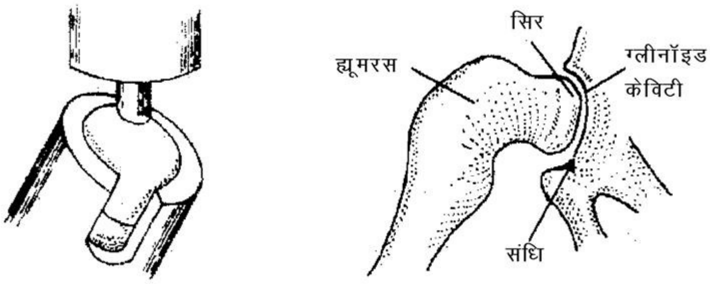

चित्र : कन्दुक खल्लिका संधि

(b) कब्जा संधि (Hinge Joint) : ये एक दिशा में ही गति करती हैं, जैसे–घुटने टखने, कुहनी तथा अंगुलास्थियों की संधियाँ।

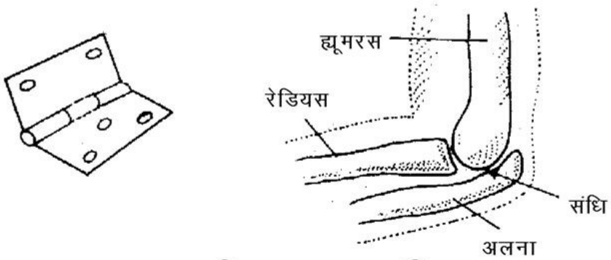

चित्र : कब्जा संधि

(c) कोणिय संधि (Angular Joint) : ये दो दिशाओं में गति करती हैं, जैसे–कलाई तथा मेटाकार्पल्स की संधियाँ।

(d) विसर्पी संधि (Gliding Joint) : ये संधियाँ एक अस्थि को दूसरी पर फिसलने के लिए स्थान देती हैं, जैसे–कलाई में कार्पल्स के बीच, दो कशेरुका के बीच।

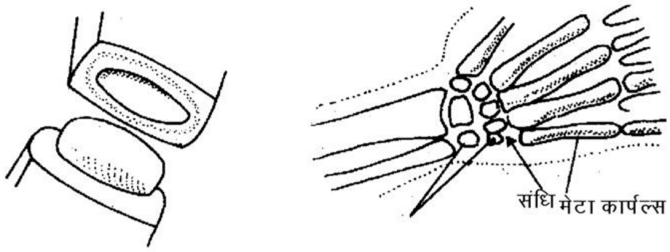

चित्र : विसर्पी संधि

(e) धुराग्र संधि (Pivot Joint) : एक अस्थि की नुकीली खूंटी धुरी की तरह स्थिर अस्थि की गुहा में फिट होकर गोल घुमाव प्रदान करती है, जैसे–मानव में एटलस तथा अक्षीय कशेरुक, रेडियस तथा अलना का ऊपरी सिरा एक-दूसरे से खूंटीदार संधि द्वारा जुड़ा रहता है।

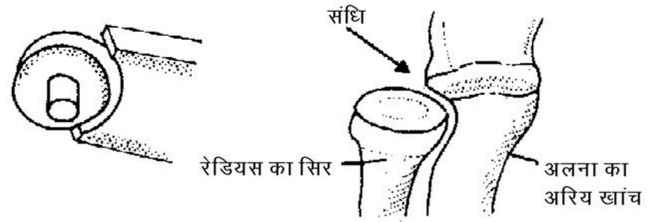

चित्र : धुराग्र संधि

(f) पल्याण संधि (Saddle Joint) : यह अविकसित कंदुक खल्लिका संधि है, जैसे–मोटाकार्पल की संधि, कुहनी की संधि।

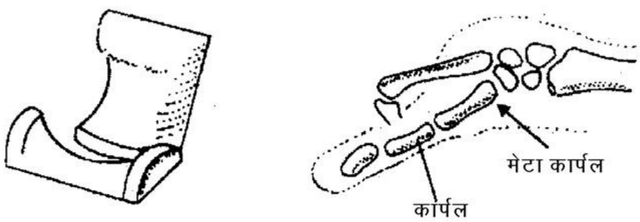

चित्र : सैडल संधि

मौखिक प्रश्न

प्रश्न–1. मानव के कर्ण अस्थिकाओं की संख्या कितनी होती है?
उत्तर– 6.
प्रश्न–2. मानव के कंकाल के कितने भाग होते हैं?
उत्तर– मानव कंकाल के दो भाग होते हैं : अक्षीय कंकाल, अनुबन्धी कंकाल।
प्रश्न–3. मानव के कटि कशेरुक की संख्या कितनी होती है?
उत्तर– 5.
प्रश्न–4. मनुष्य में पसलियों (Ribs) की संख्या कितनी होती है?
उत्तर– 12 जोड़ी.
प्रश्न–5. मानव में कितनी मेखलाएं (Girdles) होती है?
उत्तर– दो (अंस मेखला व श्रोणि मेखला)।
प्रश्न–6. शीर्षधर व अक्षीय कशेरुकाओं के मध्य कौन-सी संधि पाई जाती है?
उत्तर– धुराग्र संधि (Pivot)।
प्रश्न–7. सेन्ट्रम किसे कहते हैं?
उत्तर– एक कशेरुका से दूसरी कशेरुका का संधिस्थल सेन्ट्रम कहलाता है।

प्रयोग–11

उद्देश्य (Object) : मॉडल की सहायता से केंचुआ, कॉकरोच, मेंढक की बाह्य आकारिकी का अध्ययन करना।

उपकरण : केंचुए, कॉकरोच, मेंढक तथा चूहे के मॉडल।

(A) केंचुआ :

वर्गीकरण :

जगत	:	एनिमेलिया
संघ	:	एनिलिडा
वर्ग	:	ओलिगोकीटा
वंश	:	फेरेटिमा
जाति	:	पोस्थुमा

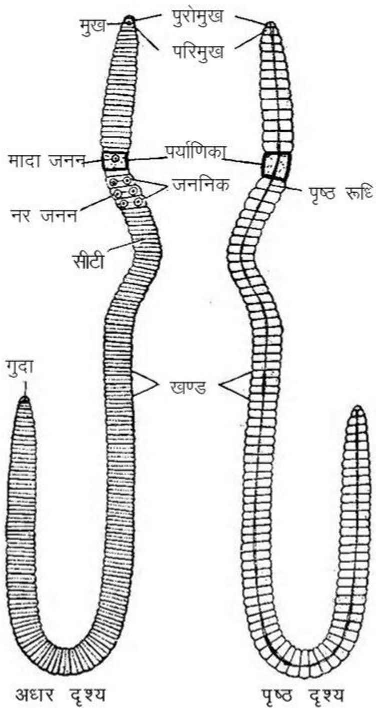

चित्र – केंचुआ

बाह्य आकारिकी :

1. केंचुए का शरीर लम्बा, संकरा व बेलनाकार होता है।
2. इसकी पृष्ठ सतह गहरे रंग की होती है तथा इस पर एक मध्य पृष्ठ रेखा होती है।
3. शरीर के अग्र भाग की ओर जनन छिद्र व जनन अंकुरक पाये जाते हैं।

खण्डीभवन (Segmentation) :

शरीर 100-120 छोटे छल्लेनुमा खण्डों (मेटामीयर्स) में विभक्त होता है। खण्डों के मध्य अन्तराखण्डीय पट्ट पाये जाते हैं।

पर्याणिका (Clitellum) :

केंचुए के 14वें, 15वें तथा 16वें खण्ड के चारों ओर मुद्राकार ग्रंथिल मोटी भित्ति पर्याणिका कहलाती है। पर्याणिका के कारण शरीर पूर्व पर्याणिका, पर्याणिक व पश्च पर्याणिका भागों में विभक्त होता है। केंचुए का प्रथम खण्ड परिमुख (पेरिस्टोमियम) तथा अंतिम खण्ड पुरोमुख (प्रोस्टोमियम) कहलाता है। परिमुख (पेरिस्टोमियम) भाग पर मुख स्थित होता है। परिमुख (पेरिस्टोमियम) के पृष्ठ भाग में एक मांसल पिण्डाकार संरचना पाई जाती है, जिसे पुरोमुख (प्रोस्टोमियम) कहते हैं।

शूक (Setae) : प्रथम, अंतिम व पर्याणिका भाग के अलावा प्रत्येक खण्ड में 80-120 सूक्ष्म S–आकार के शूक पाये जाते हैं। शूक गति में सहायक हैं।

रन्ध्र (Apertures) : केंचुए की देह भित्ति पर निम्न छिद्र पाये जाते हैं–

(i) मुख (Mouth) : केंचुए के प्रथम खण्ड के अग्र भाग पर मुख स्थित होता है।

(ii) गुदा : एक छोटा उर्ध्वाधर दरारनुमा छिद्र गुदा भाग के अंतिम खण्ड पर पाया जाता है।

(iii) पृष्ठ छिद्र (Dorsal Pores) : 12वें व 13वें खण्ड से अंतिम खण्ड की प्रत्येक अन्तःखण्डीय खांच के मध्य पृष्ठ भाग पर एक पृष्ठ छिद्र पाया जाता है।

(iv) वृक्कक छिद्र (Nephridio Pores) : प्रथम 6 खण्डों को छोड़कर केंचुए के प्रत्येक खण्ड की सतह पर वृक्कक छिद्र पाये जाते हैं।

(v) शुक्र ग्राहिका छिद्र (Spermathecal Pores) : 5/6, 6/7, 7/8, 8/9 खण्ड की अन्तःखण्डीय खांच के अधर पार्श्व में चार जोड़ी शुक्र ग्राहिका छिद्र पाये जाते हैं।

(vi) मादा जनन छिद्र (Female Genital Pore) : 14वें खण्ड के मध्य अधर सतह पर एक मादा जनन छिद्र पाया जाता है।

(vii) नर जनन छिद्र (Male Genital Pore) : 18वें खण्ड पर अधर पार्श्व सतह पर दो जोड़ी नर जनन छिद्र पाये जाते हैं।

(viii) जनन अंकुरक (Genital Papillae) : पर्याणिका भाग के पीछे 17वें व 19वें खण्ड में प्रत्येक खण्ड में एक-एक जोड़ी जनन अंकुरक पाये जाते हैं।

(B) कॉकरोच :

वर्गीकरण :

संघ	:	आर्थोपोडा
वर्ग	:	इन्सेक्टा
गण	:	ऑर्थोप्टेरा
वंश	:	पेरिप्लेनेटा

कॉकरोच की आकारिकी :

उपकरण : कॉकरोच

1. कॉकरोच पृष्ठ अधरीय चपटा, खंडीभवन युक्त कीट है।
2. इसका शरीर सिर, वक्ष तथा उदर में विभेदित होता है।
   (i) सिर : सिर अण्डाकार चपटा तथा शरीर से समकोण बनाता है। सिर में दो बड़े संयुक्त नेत्र श्रृणिकाएँ एवं मुखांग होते हैं।
   (ii) वक्ष : वक्ष छोटा, ग्रीवा के नीचे स्थित कठोर भाग है। यह सिर तथा उदर को जोड़ता है। वक्ष तीन खण्डों–अग्रवक्ष (Prothorax), मध्यवक्ष (Mesothorax) व पश्चवक्ष (Metathorax) का बना होता है। वक्ष पर दो जोड़ी पंख एवं तीन जोड़ी टांगें होती हैं।
   (iii) उदर : यह शरीर का सबसे बड़ा व चौड़ा भाग है, इसमें दस खण्ड होते हैं।
3. इसमें चमकीला काईटीनी भूरा बाह्य कंकाल पृष्ठ सतह पर होता है।
4. एक लिंगी होते हैं। नर मादा की तुलना में आकार में छोटे तथा अधिक चपटे होते हैं।

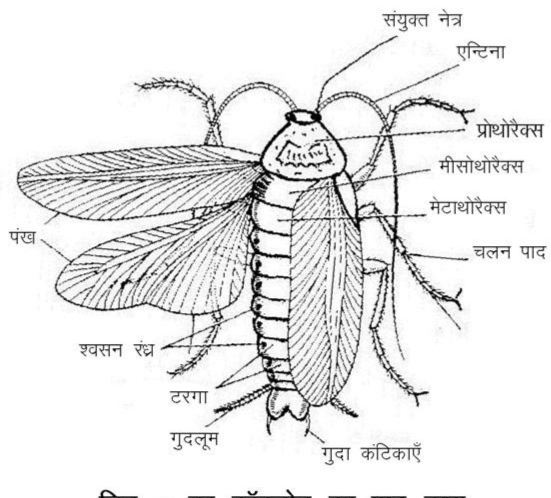

चित्र – नर कॉकरोच का पृष्ठ दृश्य

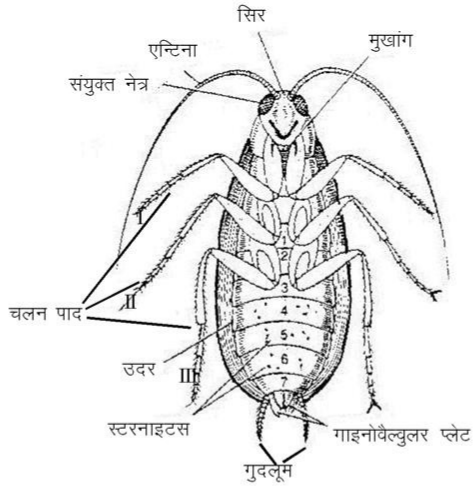

चित्र – मादा कॉकरोच का अधर दृश्य

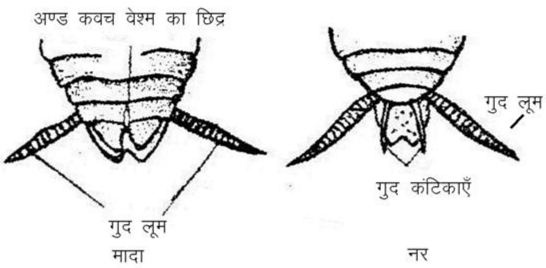

चित्र – तिलचट्टे का पश्च सिरा

नर कॉकरोच :

(i) नर कॉकरोच का शरीर छोटा, चपटा तथा छोटे उदरयुक्त होता है।

(ii) उदर में 9वें खण्ड में नुकीली दो गुद कंटिकाएं होती हैं। अतः उदर में 9 खण्ड होते हैं।

(iii) नर में पंख बड़े होते हैं, जो शरीर के पिछले सिरे तक फैले रहते हैं।

(iv) नर जनन छिद्र 9वें तथा 10वें स्टर्ना के मध्य होता है।

मादा कॉकरोच :

(i) मादा कॉकरोच का शरीर बड़ा, मोटा तथा बड़े उदर युक्त होता है।

(ii) उदर में विभेदित खण्ड होते हैं परन्तु गुदीय अनुपस्थित होते हैं।

(iii) पंख छोटे होते हैं।

(iv) मादा जनन छिद्र 8वें स्टर्नम पर होता है।

(C) भारतीय मेंढ़क (Rana Tigrina) :

वर्गीकरण :

वर्ग	:	एम्फीबिया
उपसर्ग	:	एन्यूरा
वंश	:	राना
जाति	:	टिग्रीना

बाह्य आकारिक :

1. मेंढक का शीर्ष चपटा तथा त्रिकोणाकार होता है।
2. इसकी त्वचा शल्करहित लसलसी तथा काले धब्बे युक्त हरे रंग की होती है।
3. शरीर सिर तथा धड़ प्रभागों में विभेदित होता है।
4. शरीर पर एक जोड़ी छोटे अग्रपाद एवं एक जोड़ी पश्च पाद होते हैं। अग्रपादों में चार तथा पश्च पादों में पांच नखर रहित अंगुलियाँ होती हैं। पश्च पादों की अंगुलियों के बीच तैरने के लिए जाल पाया जाता है।
5. सिर पर अर्ध गोलाकार मुख, एक जोड़ी उभरी हुई नेत्र, एक जोड़ी बाह्य नासा-छिद्र, पार्श्व में दोनों ओर कर्णपट्ट पाई जाती हैं।
6. इसके निचले जबड़े में दांत अनुपस्थित होते हैं।
7. आन्तरिक नासारन्ध्रों के दोनों ओर वोमेराइन दांत पाये जाते हैं।
8. धड़ पर पृष्ठ में कुबड़ निकली रहती है।
9. धड़ के पश्च सिरे पर एक अवस्कर द्वार होता है।

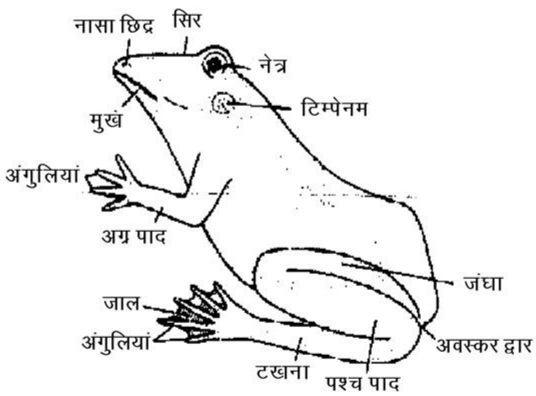

चित्र : राना टिग्रीना (मेंढ़क)

मौखिक प्रश्न

प्रश्न–1. केंचुए में श्वसन कैसा होता है?

उत्तर– उपत्वचीय श्वसन।

प्रश्न–2. केंचुए के उत्सर्जन तंत्र को क्या कहते हैं?

उत्तर– नेफ्रिडिया।

प्रश्न–3. काकरोच में मादा जनन छिद्र कहां स्थित होता है?

उत्तर– मादा जनन छिद्र 8वें स्र्टनम में होता है।

प्रश्न–4. मेंढक में पेरोटिड ग्रंथियां कहां होती हैं?

उत्तर– कर्ण पट्ट में।

प्रश्न–5. मेंढ़क किस ऋतु में प्रजनन करते हैं?

उत्तर– वर्षा ऋतु में।

प्रश्न–6. मेंढ़क की त्वचा की विशेषताएँ बताइये।

उत्तर– मेंढ़क की त्वचा शल्करहित काले धब्बों युक्त हरे रंग की होती है।